पर्याभाष

हिंदी ई-पत्रिका, 2020

अंक- 7

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

क्षेत्रीय निदेशालय (मध्य), भोपाल

संदेश

मुझे यह जानकार अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल द्वारा वार्षिक पत्रिका 'पर्याभाष' का प्रकाशन 2012 से अनवरत किया जा रहा है व इस वर्ष इसका सातवें अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। इस पत्रिका में पर्यावरण के वैज्ञानिक व तकनीकी लेखों का समावेश किया जाता है।

हिन्दी भाषा भारतीय संस्कृति की संवाहक है। यह एक उदारचरित भाषा है और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना इसे विरासत में मिली है। साथ ही राजभाषा हिन्दी देश में ज्ञान-विज्ञान के लिए वातायन खोलने वाली व राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने वाली भाषा है।

मुझे विश्वास है कि 'पर्याभाष' पत्रिका सुलभ व आसान रूप में राजभाषा हिन्दी को अपने पाठकों तक पहुचाने और इसके व्यापक प्रसार में आगे भी योगदान देती रहेगी।

मै 'पर्याभाष' के पूरे संपादक दल को बधाई देता हूं और पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य कि कामना करता हूं।

शिव दास मीणा (आई.ए.एस)
अध्यक्ष
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड,दिल्ली

संदेश

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'पर्याभाष' अपने 7वें पायदान पर पहुँच चुकी है तथा इस पत्रिका कि अभी तक कि यात्रा बेहद सफल रही है।

हिंदी हमारे जीवन के हर विविध् पहलू में जीवंत व गतिमान है। इसके बिना सामाजिक जीवन की कल्पना ही संभव नहीं है। हमारा संविधान इसे राजभाषा का दर्जा देता है। राजभाषा नियमों के अनुपालनार्थ पर्याभाष पत्रिका के माध्यम से, जहां एक ओर कार्यालय में हिन्दी के तकनीकी लेखन को बड़ावा मिल रहा है वही विभिन्न लेखों के माध्यम से पर्यावर्णीय जानकारी भी पाठकों को प्राप्त हो रही है।

'पर्याभाष' के इस अंक में मुख्यालय सहित सभी क्षेत्रीय निदेशालयों के अधिकारियों ने अपने-अपने लेख प्रेषित किए है। इस पत्रिका की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमे शिलॉग, चेन्नई, बंगलुरु, कोलकाता, पूना व वडोदरा जैसे गैर हिन्दी राज्यों के क्षेत्रीय निदेशालयों से भी सहभागिता की गई है जो इस पत्रिका के प्रकाशन को सार्थक बनाता है।

मेरी कामना है कि 'पर्याभाष' पत्रिका राजभाषा के प्रचार-प्रसार में इसी तरह अग्रणी भूमिका निभाती रहेगी। मैं क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल को बधाई देता हूं कि वह राजभाषा नियमों के कार्यान्वयन मे लगातार प्रयासरत हैं।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

डॉ.प्रशांत गार्गव
सदस्य सचिव
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड,दिल्ली

संदेश

क्षेत्रीय निदेशालय,भोपालकी पत्रिका 'पर्याभाष' के सातवें अंक को हिन्दी दिवस पखवाड़े, 2020 के अवसर पर आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है। क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल का सदैव प्रयास रहा है कि राजभाषा का अधिकाधिक उपयोग पर्यावरणीय तकनीकी लेखन के क्षेत्र में भी हो ताकि तकनीकी विषय को भी सहज रूप मे जन सामान्य को समझाया जा सके। यह भी उल्लेखनीय है की इस कार्यालय को राजभाषा के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ कार्य करने हेतु मध्य क्षेत्र में 2016 से लगातार तीन वर्ष तक गृह मंत्रालय द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

हिंदी में तकनीकी लेखन में प्रायः सभी की रुचि व रुझान होता है, लेकिन हम अपने दैनिक कार्यालयीन कार्यों, निरीक्षण, प्रबोधन व न्यायालीन कार्यों में इतने व्यस्त हो जाते हैं, कि खुद की लेखन संबंधी सृजनात्मकता प्रकट करने का समय ही नहीं निकाल पाते है। इस पत्रिका के माध्यम से इच्छुक लेखकों के तकनीकी हिंदी लेखन की क्षमता को पुनः उद्दीप्त करने का लघु प्रयास किया जा रहा है जिसमें सभी से आशानुरूप सहयोग प्राप्त हो रहा है।

इस सार्थक प्रयास को मूर्तरुप देने में मुख्यालय व क्षेत्रीय निदेशालयों के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों,लेखकों व मुख्यालय के हिन्दी प्रभाग को उनके स्वत: स्फुर्त प्रयास हेतु धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि आगामी अंकों में भी वे राजभाषा हिन्दी में अपने तकनीकी लेखों के माध्यम से पत्रिका प्रकाशन हेतु अपना सक्रिय सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

पी.जगन
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड,भोपाल

संयोजक की अभिव्यक्ति .....

माननीय सदस्य सचिव व क्षेत्रीय निदेशक की प्रेरणा से पर्याभाष-2020 का यह सातवाँ अंक संकलित करना मेरे लिए गौरव की बात है। पाणिनि के शब्दानुशासन में बंधी संस्कृत ने देववाणी का स्थान तो प्राप्त कर लिया किंतु सहज न होने के कारण उसे जनवाणी होने का गौरव प्राप्त नहीं हो सका। हिन्दी (राजभाषा) को जनवाणी होने का गौरव मिला है क्योकि इसने सभी भाषाओं के शब्दों को अंगीकार करते हुए व सहअस्तित्व के साथ अपना विकास किया है।

राजभाषा का निरंतर विकास हो तथा तकनीकी क्षेत्र में मौलिक हिन्दी लेखन भी जारी रहे इस उद्देश्य से क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल द्वारा 'पर्याभाष' नामक हिन्दी पत्रिका का शुभारंभ 2012 में किया था, जो हिन्दी के तकनीकी लेखकों के सहयोग व स्नेह से अनवरत जारी है।

'पर्याभाष' के इस अंक में जल मल संयंत्र, कार्बन कर, अवैध रेत खनन, आद्रभूमि, वायु प्रदूषण, अपशिष्ठ जल का इनसीटू उपचार, प्लास्टिक प्रदूषण, लॉक डाउन में प्रदूषण स्तर, विकास एवं पर्यावरण, ऑइल प्रदूषण, ओर्गनिक खेती आदि समसामयिक विषयों को समाहित किया गया है। आशा है 'पर्याभाष' का यह अंक आपको पसंद आएगा व रुचिकर लगेगा।

कोई भी कृति संपूर्ण नहीं होती, अतः 'पर्याभाष' के आगामी अंक को और अधिक ज्ञानवर्धक व सार्थक बनाने हेतु आपकी स्नेहवत् प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

डॉ.अनूप चतुर्वेदी
वरिष्ठ वैज्ञानिक सहायक
क्षेत्रीय निदेशालय,भोपाल

अनुक्रमणिका

क्रमांक	विवरण	प्रष्ठ क्रमांक
01	**मलजल उपचार संयंत्र - एक परिचय** श्री एस.सुरेश, वैज्ञानिक 'ई' व क्षेत्रीय निदेशक (दक्षिण) बेंगलुरु	1 - 4
02	**सौर ऊर्जा - वर्तमान परिदृश्य में** डॉ.पी.के.बेहेरा, वैज्ञानिक 'ई' शोध व अनुसंधान प्रभाग, मुख्यालय, नई दिल्ली	5 - 9
03	**कार्बन-टैक्स : "अवधारणा और भविष्य"** श्री प्रसून गार्गव, वैज्ञानिक 'ई' व क्षेत्रीय निदेशक, वडोदरा श्री मनोज शर्मा, वरिष्ठ वैज्ञानिक सहायक, वडोदरा	10 - 13
04	**मॉरीशस में तेल रिसाव एक पर्यावरणीय दुर्घटना-2020** श्री पी.जगन वैज्ञानिक 'ई' व क्षेत्रीय निदेशक, भोपाल श्री संजय कुमार मुकाती,एस.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय भोपाल	14 - 17
05	**अवैध रेत खनन - एक पर्यावर्णीय समस्या** डॉ.आर.पी.मिश्रा, वैज्ञानिक 'घ' क्षेत्रीय निदेशालय,भोपाल श्री मिलिंद निमजे, वैज्ञानिक 'ग'क्षेत्रीय निदेशालय,भोपाल	18 - 21
06	**आर्द्रभूमि - एक परिचय** डॉ.दिलीप मार्केण्डेय वैज्ञानिक ई जैव प्रयोगशाला दिल्ली	22 - 25
07	**प्लास्टिक एक आवश्यक प्रदूषक व इसका प्रबंधन** श्री शशिकांत लोखण्डे, वैज्ञानिक ई क्षेत्रीय निदेशालय,पूना श्री नृपेन्द्र सेमवाल, वैज्ञानिक ग क्षेत्रीय निदेशालय,वडोदरा	26 - 30
08	**ककरेठा, आगरा स्थित आद्र-भूमि पर नालों के अपशिष्ट जल का यथा-स्थान (in-situ) जैव-निदान: एक अध्ययन** श्री कमल कुमार, वैज्ञा. घ एवं प्रभारी अधिकारी, आगरा डॉ. विपुल कुमार सिंह, वरि.वैज्ञा.सहा. आगरा	31 - 34
09	**वायु प्रदूषण और दिपावली** श्री एस.कार्तिकेयन, वैज्ञानिक ग क्षेत्रीय निदेशालय, चेन्नई	35 - 37
10	**लॉकडाउन मे पृथ्वी दिवस एक सुखद अनुभव** डॉ.चन्द्रकान्त दीक्षित, वैज्ञानिक 'ग'जल प्रयोगशाला दिल्ली श्रीमती बी. शशि देवी, एस.एस.ए जल प्रयोगशाला दिल्ली	38 - 41
11	**लॉकडाउन में प्रदूषण स्तर** डॉ.अनामिका सिंग, वैज्ञानिक ख क्षेत्रीय निदेशालय, लखनऊ	42 - 44

12	**मनुष्य, विकास और पर्यावरण** डॉ.रानू चौकसे वर्मा, वैज्ञानिक ख क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल	45 - 47
13	**पर्यावरण के प्रति संवेदना** श्री अवनीन्द्र कुमार, एस.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय, कोलकाता श्री अजय दुबे, जे.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय, कोलकाता	48 - 50
14	**सिक्कम में जैविक खेती से पर्यावरण संरक्षण** श्री आनंद कुमार ड़ांड़ोम, जे.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय,शिलोंग	51 - 55
15	**कोरोना काल में बायोमेडिकल वेस्ट प्रबंधन एक चुनौती** डॉ. अनूप चतुर्वेदी, वरिष्ठ वैज्ञानिक सहायक, क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल	56 - 61

नोट : पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के है, भारत सरकार अथवा केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का उससे सहमत होना आवश्यक नही है।

पत्रिका में कुछ सामग्री व फ़ोटो साभार गूगल के माध्यम से प्राप्त किए गये है।

मलजल उपचार संयंत्र - एक परिचय

श्री.एस.सुरेश, क्षेत्रीय निदेशक, बंगलुरु

पूरी दुनिया में आने वाले समय में उपयोग करने लायक पानी की उपलब्धता को लेकर बहस चल रही है। ऐसे में मलजल उपचार संयंत्र की उपयोगिता दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। क्या आपने सोचा है कि हमारे घरों व उद्योगों से निकलने वाला गंदा पानी कहां जाता है? ये पानी हमारे घरों व उद्योगों से बहकर किसी नदी, तालाब में पहुंचता है और उनको दूषित कर देता है। इसे ही रोकने और दूषित जल को पुन: प्रयोग में लाने के लिए मलजल उपचार संयंत्र का प्रयोग किया जाता है।

क्या होता है मलजल उपचार संयंत्र

मलजल उपचार संयंत्र में दूषित जल और घर में प्रयोग किये गये जल के दूषणकारी अवयवों को विशेष विधि से साफ किया जाता है। इसको साफ करने के लिए भौतिक, रासायनिक और जैविक विधि का प्रयोग किया जाता है। इसके माध्यम से दूषित पानी को दोबारा प्रयोग में लाने लायक बनाया जाता है और इससे निकलने वाली गंदगी का इस प्रकार शोधन किया जाता है कि उसका उपयोग वातावरण के सहायक के रूप में किया जा सके ।

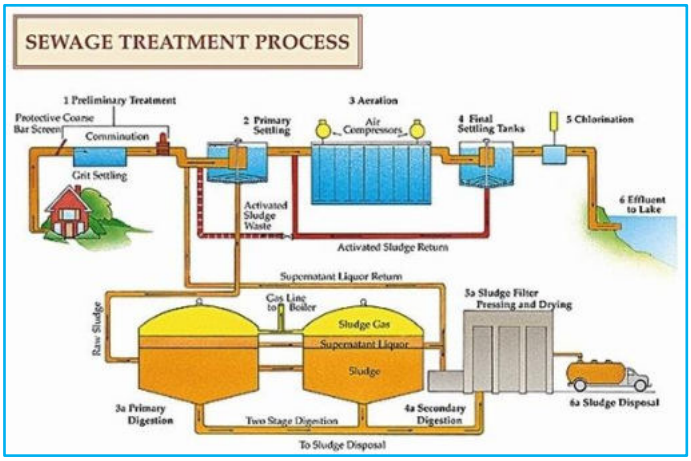

मलजल उपचार संयंत्र की रूपरेखा एवं ढांचा-निर्माण की प्रकिया पर्यावरणीय अभियंत्रिकों के द्वारा पूर्ण की जाती है। वे, निर्धारित शोधन मानकों के अनुसार, विभिन्न प्राकृतिक एवं कृत्रिम उपकरणों की मदद से सभी भौतिक, रासायनिक, जैविक प्रक्रियाओं से दूषित जल का शोधन करते हैं। जिसके परिणामस्वरूप स्वच्छ एवं सुरक्षित उपचारित जल प्राप्त किया जाता है, जो बाद में प्रयोजन तथा पुनःउपयोग के लिए भेज दिया जाता है। परंतु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि शोधन प्रक्रिया के पश्चात भी जल में कुछ जैविक तथा अजैविक एवं हानिकारक तत्व बच जाते हैं, जिस कारण वह जल पुनःउपयोग के लिए उचित नही होता।

मलजल उपचार संयंत्र में निम्नलिखित 2 प्रकार की प्रक्रियाएं शामिल होती हैं:-

1) एनेरोबिक (अवायवीय) सीवेज संयंत्र: सीवेज टैंक के कुछ हिस्से में ऑक्सीजन मुक्त एनेरोबिक बैक्टीरिया को रखा जाता है, सीवेज टैंक में ऑक्सीजन की अनुपस्थिति के कारण सीवेज आंशिक रूप से विघटित होने लगता है। जिसके कारण वहां उपस्थित कार्बनिक पदार्थ मीथेन, हाइड्रोजन सल्फाइड, कार्बन डाइऑक्साइड इत्यादि गैसों में परिवर्तित होने लगता है। इस प्रकिया का प्रयोग मुख्यतः ठोस एवं कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों के शोधन के लिए किया जाता है। ऐसा इसलिए क्योंकि एनेरोबिक प्रक्रिया द्वारा यह अपशिष्ट पदार्थ का भार एवं आयतन काफी हद तक कम कर देता है।

2) एरोबिक (वायवीय) सीवेज संयंत्र: इस प्रक्रिया में एरोबिक बैक्टीरिया द्वारा प्रदूषक तत्वों को भोज्य पदार्थ के रूप में अपचयित कर लिया जाता है। एरोबिक बैक्टीरिया को श्वसन के लिए वायु तथा ऑक्सीजन मिलती रहनी चाहिए। इन बैक्टीरिया के द्वारा पूर्ण रूप से ऑक्सीकरण एवं कार्बनिक पदार्थों को भोज्य के रूप में ग्रहण कर, शेष कार्बन डाइऑक्साइड, जल एवं नाइट्रोजन गैस प्राप्त की जाती है। इस तरह से यह प्रक्रिया जल से प्रदूषण एवं दुर्गन्ध को दूर कर शोधित जल प्रदान करती है, जिसे आगे ले जाकर किसी नदी के साथ प्रवाहित कर दिया जाता है। नवीन एवं छोटे स्तर के एरोबिक संयंत्रों में प्राकृतिक वायु प्रवाह का प्रयोग किया जाता है, जिसमे विद्युत आपूर्ति की आवश्यकता नही होती।

पारंपरिक मलजल उपचार में प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है:-

1) प्राथमिक चरण: यह आमतौर पर एनेरोबिक प्रक्रिया से संचालित होता है। सर्वप्रथम, सीवेज से ठोस अपशिष्ट पदार्थ अलग किये जाते हैं। भारी होने के कारण यह प्राथमिक सेटलमेंट टैंक के तल पर स्थिर हो जाते हैं। एनेरोबिक प्रक्रिया के कारण यह अपशिष्ट निरंतर गति से आयतन एवं भार में कमी करके जल शोधित करता है।

2) द्वितीयक चरण: यह एरोबिक प्रक्रिया द्वारा चालित होता है। प्राथमिक चरण के बाद बचे जल में घुलनशील एवं कणों के आकार के पदार्थ मिश्रित होते हैं। विभिन्न जलीय वायवीय जीवाणुओं एवं बैक्टीरिया की सहायता से प्रदूषित कणों को भोजन के रूप में ग्रहण कर जल को स्वच्छ करता है। अधिकांशतः बचा हुआ जल इतना सुरक्षित होता है जिससे उसे सीधे नदी या तालाब में निस्सारित किया जा सके।

3) तृतीयक अथवा अन्तिम चरण: यद्यपि ऐसा भी होता है जब द्वितीयक उपचार चरण की पूर्ति के बाद भी, जल निस्सारण करने जितना स्वच्छ नही हो पाता तब यह कार्य शोधन प्रक्रिया के तृतीयक चरण के अंतर्गत होता है। इस चरण मे अमोनिकल नाइट्रोजन को नाइट्रोजन गैस में परिवर्तित करने के लिए मलजल उपचार संयंत्र प्रक्रिया में पहले नाईट्रीकरण, उसके पश्चात् विनाइट्रीकरण विधि का प्रयोग किया जाता है।जिसके पश्चात् बिना किसी पर्यावरणीय हानि के नाइट्रोजन गैस वातावरण में मिल जाती है।

इस जल में मौजूद अपशिष्ट पदार्थों एवं रसायनों को सुरक्षित स्तर तक जल संशोधन प्रक्रिया द्वारा उपचार किया जाता है। मलजल अर्थात सीवेज का उपचार, अधिकांशतः उसी स्थान पर किया जाता है जहाँ इसका निर्माण हुआ होता है। परंतु जब ऐसा संभव नही हो पाता, तब इसे एकत्र करके पाइपों की मदद से एक स्थान से दूसरे स्थान अर्थात नगरपालिका के मलजल शोधन संयंत्र तक लाया जाता है। आधुनिक ईको-शहरों में मलजल उपचार संयंत्र को मुख्य एवं महत्ता वाले स्थान पर लगाया जाता है। जिसके कारण सीवेज को संयत्र तक ले जाने में निहित परिवहन-लागत में कमी लाई जा सके। चर्चित रूप में इसे 'सीवेज उपचार संयंत्रों का विकेंद्रीकरण' कहा जाता है।

क्या उपयोग है उपचरित जल का

मलजल शोधन प्रक्रिया से तात्पर्य घरेलू एवं औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले दूषित तथा अपशिष्ट जल का शोधन करना है। इसके अंतर्गत भौतिक, जैविक

एवं यदा-कदा रासायनिक प्रक्रियाओं के द्वारा जल में उपस्थित अपशिष्ट पदार्थों को अलग कर जल का संरक्षण व पुनरूपयोग किया जाता है।

इस प्रक्रिया द्वारा मलजल को संशोधित करके पुनः उपयोग हेतु उपलब्ध कराया जाता है। कई बार शोधित जल का प्रयोग कृषि में भी किया जाता है। कुछ स्थानों पर मलजल के उपचार मे उत्पन्न हुए स्लज का उपयोग ईंधन के रूप में किया जा रहा है। इस उपचारित जल का उपयोग मुख्यतः उद्योगों में, कृषि में, घरों में, व्यावसायिक संस्थानों में एवं विनिर्माण इकाइयों में किया जाता है। अतिरिक्त उपचारित जल को प्रयोग में आने की स्थिति में नदी, तालाबों आदि में प्रवाहित कर दिया जाता है।

सौर ऊर्जा - वर्तमान परिदृश्य में

डॉ. पी. के. बेहेरा, वैज्ञानिक 'ई'
शोध व अनुसंधान प्रभाग, मुख्यालय, नई दिल्ली

धरती पर पड़ने वाली सूरज की रौशनी और उसमे मौजूद गर्मी ही सौर ऊर्जा कहलाती है। धरती पर सौर ऊर्जा ही एकमात्र ऐसा ऊर्जा स्रोत है जो अन्य ऊर्जा स्रोतों की तुलना में अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध है। सूर्य से पृथ्वी पर अधिक मात्रा में ऊर्जा पहुँचती है तथा पृथ्वी पर इसका इस्तेमाल विद्युत् उत्पन्न करने में भी किया जाता है। विज्ञान एवं तकनीक में होने वाले विकास की मदद से मनुष्य ने ऐसी तकनीक ईजाद कर ली है जिससे धरती पर पड़ने वाली सूरज की किरणों को विज्ञान एवं तकनीक की मदद से विद्युत् में परिवर्तित किया जाता है। हर साल सूर्य से पृथ्वी पर पहुंचने वाली ऊर्जा की मात्रा धरती पर पाए जाने वाले समस्त कोयले, तेल, गैस आदि की मात्रा से 130 गुना अधिक है।

दुनियाभर में सौर ऊर्जा का प्रचलन अब तेज़ी से बढ़ रहा है क्योंकि लोग पर्यावरण संरक्षण के लिए जागरूक हो रहे हैं तथा पारंपरिक ऊर्जा स्रोत से उत्पन्न होने वाली बिजली की कीमत ज़्यादा होने के कारण भी लोग सौर ऊर्जा का अधिकतम इस्तेमाल कर रहे हैं। अगर कोई राष्ट्र विकसित राष्ट्र की श्रेणी में आना चाहता है तो उसके लिए ऊर्जा के पर्याप्त स्रोत का होना अति आवश्यक है। ऐसे में सौर ऊर्जा का अधिकतम एवं सर्वश्रेष्ठ उपयोग करने वाला राष्ट्र विकसित राष्ट्र बनने की कतार में एक पायदान ऊपर पहुंच ही जायेगा। सौर ऊर्जा को विद्युत् में परिवर्तित करने के लिए सोलर पैनलों का उपयोग किया जाता है जिसमे फोटोवोल्टिक सेल लगे होते हैं और ये सेल सोलर पैनल पर पड़ने वाली धूप को विद्युत् में परिवर्तित कर देते हैं।

<u>सौर ऊर्जा क्या है?</u>

सौर ऊर्जा वह ऊर्जा है जो सीधे सूर्य से प्राप्त की जाती है। वैसे तो सौर ऊर्जा का इस्तेमाल पेड़-पौधों, जीव जंतुओं एवं जलवायु द्वारा किया विभिन्न स्तर पर किया जाता है लेकिन आजकल सौर ऊर्जा से विद्युत् उत्पन्न करने का भी प्रचलन बढ़ गया

है। सौर ऊर्जा से विद्युत् उत्पन्न करने के लिए सोलर पैनल का इस्तेमाल किया जाता है।

सोलर पैनल क्या है और यह कैसे काम करता है?

पैनल वो उपकरण होता है जिसकी मदद से सूरज की किरणों को विद्युत् में परिवर्तित किया जाता है। सूर्य से निकलने वाली किरणों में जो कण पाए जाते हैं उन्हें फोटोन कहा जाता है। इन फ़ोटॉन को सोलर पैनलों की मदद से ऊष्मा या विद्युत् में परिवर्तित करने के लिए ही सोलर पैनलों का इस्तेमाल किया जाता है। सोलर पैनलों में फोटोवोल्टिक सेल लगे होते हैं जो सिलिकॉन से बने होते हैं। जब सूर्य की रौशनी इन सेल पर पड़ती है तो फ़ोटॉन की ऊर्जा अवशोषित हो जाती है और ऊपरी परत में पाए जाने वाले इलेक्ट्रॉन सक्रिय हो जाते हैं। धीरे धीरे यह ऊर्जा पूरे पैनल में प्रवाहित होती है और इस प्रकार विद्युत् का उत्पादन होता है।

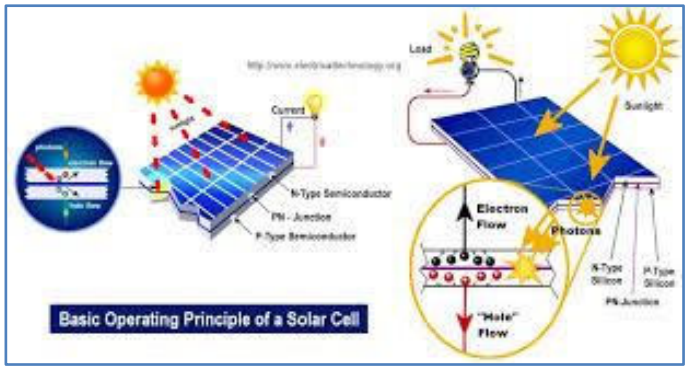

सोलर पैनल का महत्त्व

सोलर पैनल का सबसे बड़ा फायदा है कि इससे हम पर्यावरण को नुक्सान पहुँचाए बिना बिजली उत्पन्न करते हैं। सोलर पैनल से विद्युत् उत्पन्न करने पर किसी भी प्रकार की विषैली गैस का उत्सर्जन नहीं होता है, न ही किसी प्रकार से ध्वनि प्रदूषण होता है एवं इसमें विद्युत् उत्पादन के दौरान वायु प्रदूषण भी नहीं होता है।

उल्लेखनीय है कि भारत समृद्ध सौर ऊर्जा संसाधनों वाला देश है। भारत ने पिछले कुछ वर्षों में सौर ऊर्जा के क्षेत्र में बेहतर प्रयास किये हैं और उन्ही प्रयासों के तहत हाल ही में प्रधानमंत्री ने मध्य प्रदेश के रीवा में स्थापित 750 मेगावाट की 'रीवा सौर परियोजना' (Rewa Solar Project) को राष्ट्र को समर्पित किया। यह सौर परियोजना 'ग्रिड समता अवरोध' (Grid Parity Barrier) को तोड़ने वाली देश की पहली सौर परियोजना थी। यह परियोजना वार्षिक तौर पर लगभग 15 लाख टन कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2) उत्सर्जन को कम करने में सहायक होगी।

भारत में सौर ऊर्जा की स्थिति

- भारत एक उष्ण-कटिबंधीय देश है। उष्ण- कटिबंधीय देश होने के कारण हमारे यहाँ वर्ष भर सौर विकिरण प्राप्त होती है, जिसमें सूर्य प्रकाश के लगभग 3000 घंटे शामिल हैं।

- भारत सरकार ने 2022 के अंत तक 175 गीगावाट नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता का लक्ष्य निर्धारित किया है। इसमें पवन ऊर्जा से 60 गीगावाट, सौर ऊर्जा से 100 गीगावाट, बायोमास ऊर्जा से 10 गीगावाट और लघु जलविद्युत परियोजनाओं से 5 गीगावॉट शामिल है।

- सौर ऊर्जा उत्पादन में सर्वाधिक योगदान रूफटॉप सौर उर्जा (40 प्रतिशत) और सोलर पार्क (40 प्रतिशत) का है।
- यह देश में बिजली उत्पादन की स्थापित क्षमता का 16 प्रतिशत है। सरकार का लक्ष्य इसे बढ़ाकर स्थापित क्षमता का 60 प्रतिशत करना है।
- यदि भारत में सौर ऊर्जा का इस्तेमाल बढ़ाया जा सकेगा तो इससे जीडीपी दर भी बढ़ेगी और भारत सुपरपावर बनने की राह पर भी आगे बढ़ सकेगा।

सौर ऊर्जा से होने वाले लाभ

- सौर ऊर्जा कभी खत्म न होने वाला संसाधन है और यह नवीकरणीय संसाधनों का सबसे बेहतर विकल्प है।
- सौर ऊर्जा वातावरण के लिये भी लाभकारी है। जब इसे उपयोग किया जाता है, तो यह वातावरण में कार्बन-डाइऑक्साइड और अन्य हानिकारक गैसें नहीं छोड़ती, जिससे वातावरण प्रदूषित नहीं होता।
- सौर ऊर्जा अनेक उद्देश्यों के लिये प्रयोग की जाती है, इनमें उष्णता, भोजन पकाने और विद्युत उत्पादन करने का काम शामिल है।
- सौर ऊर्जा को प्राप्त करने के लिये विद्युत या गैस ग्रिड की आवश्यकता नहीं होती है। एक सौर ऊर्जा निकाय को कहीं भी स्थापित किया जा सकता है। सौर उर्जा के पैनलों (सौर ऊर्जा की प्लेट) को आसानी से घरों में कहीं पर भी रखा जा सकता है। इसलिये, ऊर्जा के अन्य स्रोतों की तुलना में यह काफी सस्ता भी है।

सौर ऊर्जा की राह में चुनौतियाँ

- सौर ऊर्जा प्लेटों को स्थापित करने के लिये ज़मीन की उपलब्धता में कमी।
- कुशल मानव संसाधनों का अभाव।
- भारत में बने सोलर सेल (फोटोवोल्टेइक सेल) भी अन्य आयातित सोलर सेलों के मुकाबले कम दक्ष हैं।

- विभिन्न नीतियाँ और नियम बनाने के बावजूद सोलर पैनल लगाने के खर्च में कमी नहीं।
- आवासीय घरों में छतों पर सोलर पैनल लगाने पर आने वाला भारी खर्च सौर ऊर्जा परियोजनाओं की राह में बड़ी बाधा।

अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (International Solar Alliance)

- यह गठबंधन सौर ऊर्जा संपन्न देशों का एक संधि आधारित अंतर-सरकारी संगठन है।
- ISA की स्थापना की पहल भारत ने की थी और पेरिस में 30 नवंबर, 2015 को संयुक्त राष्ट्र जलवायु सम्मेलन के दौरान CoP-21 से पृथक भारत और फ्राँस ने इसकी संयुक्त शुरुआत की थी।

- कर्क और मकर रेखा के मध्य आंशिक या पूर्ण रूप से अवस्थित 122 सौर संसाधन संपन्न देशों के इस गठबंधन का मुख्यालय गुरुग्राम में है।
- ISA से जुड़े 67 देश गठबंधन में शामिल हो गए हैं और फ्रेमवर्क समझौते की पुष्टि कर दी है।
- ISA फ्रेमवर्क में वर्ष 2030 तक नवीकरणीय ऊर्जा, ऊर्जा क्षमता और उन्नत व स्वच्छ जैव-ईंधन प्रौद्योगिकी सहित स्वच्छ ऊर्जा के लिये शोध और प्रौद्योगिकी तक पहुँच बनाने हेतु अंतरराष्ट्रीय सहयोग बढ़ाने तथा ऊर्जा अवसंरचना एवं स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकी में निवेश को बढ़ावा देने का लक्ष्य तय किया गया है।
- ISA के प्रमुख उद्देश्यों में 1000 गीगावाट से अधिक सौर ऊर्जा उत्पादन की वैश्विक क्षमता प्राप्त करना है।

निष्कर्ष

भारत में विगत एक दशक के दौरान बढ़ती आबादी, आधुनिक सेवाओं तक पहुँच, विद्युतीकरण की दर तेज होने और जीडीपी में वृद्धि की वजह से ऊर्जा की मांग तेज़ी से बढ़ी है और माना जाता है कि इसे पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के बजाय सौर ऊर्जा के ज़रिये आसानी से पूरा किया जा सकता है। देश की ऊर्जा ज़रूरतों को पूरा करने के लिये न केवल बुनियादी ढाँचा मज़बूत करने की ज़रूरत है, बल्कि ऊर्जा के नए स्रोत तलाशना भी ज़रूरी है। ऐसे में, सौर ऊर्जा क्षेत्र भारत के ऊर्जा उत्पादन और

मांगों के बीच की बढ़ती खाई को बहुत हद तक पाट सकता है। हमें यह याद रखना होगा कि सौर ऊर्जा स्वच्छ-अक्षय ऊर्जा है, इसका ज्यादा-से-ज्यादा दोहन देश के ऊर्जा क्षेत्र को आत्मनिर्भर बनाने का काम करेगा। जिसका लाभ देश की तरक्की को अनेक क्षेत्रों में उपलब्ध होगा।

कार्बन-टैक्स : "अवधारणा और भविष्य"

श्री प्रसून गार्गव, क्षेत्रीय निदेशक, वडोदरा
श्री मनोज कुमार शर्मा,व.वै.स.,क्षेत्रीय निदेशालय, वडोदरा

संपूर्ण प्रकृति अपने स्वाभाविक नियमों के अंतर्गत एक संतुलित चक्र से बंधी हुई है। सामान्य जीवन यापन सहित मानवीय विकास के तमाम क्रियाकलाप और आयाम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्राकृतिक संसाधनों के आधीन हैं। उदारवादी प्रकृति काफी हद तक हमारी जरूरतों को पूरा करने और उससे उपजे आंशिक आंतरिक असंतुलन की भरपाई करने में स्वयं समर्थ है। लेकिन वैश्विक स्तर पर विकास की अंधी दौड़ से उपजे इस असंतुलन का दायरा जब बहुत अधिक विस्तृत हो जाता है, तो यह तरह-तरह के पर्यावरणीय प्रदूषणों, प्राकृतिक आपदाओं, अम्ल वर्षा, जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग तथा ओजोन परत के क्षय़ का कारण बनते हैं। जलवायु परिवर्तन वर्तमान समय की सबसे बड़ी वैश्विक चुनौतियों में से एक है। यह विकास की गति के दशकों को पीछे हटाने की चुनौती देता है और जीवन, आजीविका और आर्थिक विकास को खतरे में डालता है। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र के अंतर सरकारी पैनल की नवीनतम रिपोर्ट, पूर्व-औद्योगिक स्तर से दो डिग्री सेल्सियस अधिक वैश्विक औसत तापमान में वृद्धि को रोकने के लिए कार्बन पर कीमत लगाने के महत्व को स्पष्ट करती है। प्रत्येक देश की अलग-अलग परिस्थितियों और प्राथमिकताओं के आधार पर, विभिन्न उपकरणों का उपयोग कार्बन को कुशलता पूर्वक कीमत देने और उत्सर्जन को प्रभावी ढंग से कम करने के लिए किया जा सकता है, जैसे घरेलू उत्सर्जन ट्रेडिंग सिस्टम, कार्बन टैक्स, या उत्सर्जन में कटौती के लिए भुगतान।

कार्बन पर कर निर्धारण जीवाश्म ईंधन की जगह कम कार्बन उत्सर्जन वाले ईंधन एवं गैर पारंपरिक और नवीनीकृत ऊर्जा स्रोतों के प्रयोग को बढ़ावा देनेके साथ साथ उस क्षति के बोझ को वापस स्थानांतरित करने में मदद करता है जो इस के लिए जिम्मेदार हैं, और जो इसे कम कर सकते हैं। यह तय करने के बजाय कि

उत्सर्जन को कहां और कैसे कम करना चाहिए, कार्बन मूल्य एक आर्थिक संकेत देता है और प्रदूषणकर्ता खुद तय करते हैं कि क्या अपनी प्रदूषण गतिविधि को रोकना है, उत्सर्जन को कम करना है या प्रदूषण को जारी रखना है और इसके लिए भुगतान करना है। इस तरह, समाज के लिए सबसे अधिक लचीले और कम-लागत वाले तरीके से समग्र पर्यावरणीय लक्ष्य प्राप्त किया जाता है। कार्बन मूल्य आर्थिक विकास के नए आयाम, कम कार्बन उत्सर्जन अभियान को बढ़ावा देने, स्वच्छ प्रौद्योगि की और बाजार नवाचार को उत्तेजित करता है। किसी भी देश की सरकार अलग अलग तरीके से कार्बन उत्सर्जन के कारण हुए फसलों को नुकसान, गर्मी की लहरों और सूखे से स्वास्थ्य देखभाल की लागत का बढ़नाया बाढ़ और समुद्र के स्तर में वृद्धि से संपत्तियों को हुए नुकसान की भरपाई के लिए कार्बन टेक्स ले सकती है।

इस संबंध में चिंता जताने, विचार-विमर्श करने तथा आपसी सहमति बनाने के तमाम राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम किये जाते रहे हैं। लिहाजा क्योटो प्रोटोकॉल के 20 वर्ष बाद अब जलवायु परिवर्तन के न्यूनीकरण के साधनों के लिए अधिक वैश्विक समर्थन और जागरूकता प्राप्त है। 20 सितंबर 2018 को कनाडा में जलवायु परिवर्तन पर हुई जी-7 की बैठक में यह चर्चा की गई कि जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए कार्बन उत्सर्जन पर कर लगाना या कार्बन प्रदूषण पर शुल्क लगाना जरूरी है। प्रति टन कार्बन उत्सर्जन पर शुल्क आंकलन की प्रक्रिया का हवाला देते हुए विश्व बैंक ने कहा कि हमारा मानना है कि कार्बन उत्सर्जन के प्रति एक शैडो शुल्क तय करके हम इस दिशा में एक आर्थिक संकेत दे सकते हैं। वैज्ञानिक और अर्थशास्त्री इस बात पर एक मत हैं कि अर्थव्यवस्थाओं के व्यवहार में बदलाव लाने के संकेत देने का सबसे अच्छा विकल्प कार्बन शुल्क ही है। इस कर के तहत सबसे ज्यादा प्रदूषण फैलाने वाली कंपनियों को कोटा दिया गया है। साथ ही उन्हें अन्य कंपनियों के साथ कोटे की खरीद-बिक्री का अधिकार भी दिया गया है। इस कर के अंतर्गत 1 टन उत्सर्जित कार्बन का मूल्य 1 डॉलर से लेकर 133 अमेरिकी डॉलर तक तय किया गया है। 1 अप्रैल 2018 से यह कर विश्व के 46 देशों और 26 द्वीपीय

सरकारों नें अपने यहां लागू किया हुआ है। कई और देश और क्षेत्राधिकार कार्बन के मूल्य निर्धारण की तैयारी को आगे बढ़ा रहे हैं। कार्बन मूल्य निर्धारण के अंतर्गत आने वाली कंपनियों पहले से ही अपने उत्सर्जन के प्रबंधन में विशेषज्ञता विकसित कर रही हैं और अपने व्यावसायिक नियोजन में ग्रीनहाउस गैस कटौती लक्ष्यों को शामिल कर रही हैं।

दरअसल कार्बन टैक्स प्रदूषण पर कर का एक रूप है, जिसमें कार्बन उत्सर्जन की मात्रा के आधार पर जीवाश्म ईंधनों के उत्पादन, वितरण एवं उपयोग पर शुल्क लगाया जाता है। कार्बन कर जीवाश्म ईंधन का मूल्य बढ़ायेगा। इसमें कोयले की तरह अधिक उत्सर्जन करने वाले ईंधनों पर अधिक कर लगाया जायेगा। यह कर उच्चकार्बन उत्सर्जन ईंधन की मांग को कम करेगा और प्राकृतिक गैस जैसे निचले उत्सर्जन ईंधन की मांग में वृध्दि करेगा। सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा, और जलविद्युत जैसे अक्षय ऊर्जा के स्रोतों पर कम कर या कोई कर नहीं होगा। यह निगेटिव एक्सटर्नलिटीज़ के आर्थिक सिध्दांतों पर आधारित एक अप्रत्यक्ष कर है। सरकार प्रतिटन कार्बन उत्सर्जन पर मूल्य निर्धारित करती है, जिससे यह कार्बन उत्सर्जक (जनजीवन पर नकारात्मक असर डालने वाले) ईंधनों के उपयोग को मंहगाकर देता है, उन्हें हतोत्साहित करता है, साथ ही नवीकरणीय ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देता है। वर्ष 1990 में अपने यहां कार्बन कर लगाने वाला फिनलैंड विश्व का पहला देश बन गया था। उसके बाद वर्ष 1991 में स्वीडन और ब्रिटेन ने इसे अपनाया। भारत में यह कर 1 जुलाई 2010 से लागू है।

एक अनुमान के अनुसार मानवीय क्रियाओं द्वारा विश्व में 27 बिलियन टन कार्बन प्रतिवर्ष उत्सर्जित किया जाता है। जो कि काफी चिंताजनक है। इस संबंध में वर्ष 1992 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने ब्राजील के रियो डि जेनेरियो शहर में आयोजित जलवायु परिवर्तन पर एक सम्मेलन में हरित गैसों के स्तर को नियंत्रित करने तथा इससे पर्यावरण पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को कम करने की दिशा में कार्बन कर का प्रस्ताव रखा गया था। संयुक्त राष्ट्र का मानना है कि यह कर प्रशासनिक दृष्टि से उपयोग में लाये जाने और लागू करने के नजरिये से भी काफी आसान और लचीला है। इससे विश्व कार्बन उत्सर्जन के बेलगाम होते बाजार को काफी हद तक काबू किया

जा सकता है। साथ ही इससे प्राप्त राजस्व का उपयोग सरकार आयकर सहित अन्य प्रत्यक्ष करों को कम करने, गरीबों को मुफ्त में बिजली प्रदान करने, वैकल्पिक ऊर्जा के संसाधन विकसित करने तथा गैसोलीन, बिजली आदि के बिलों के भुगतान करने के लिए कर सकती है। सर्वमान्य कार्बन टैक्स के लिए आधारभूत कर इकाई और प्रबंधन, जैसे कर का एकत्रीकरण आदि संबंधी खामियां भी आड़े आती हैं। साथ ही इसके लागू करने के पक्ष में राजनैतिक सहमति बना पाना भी आसान नहीं है। दरअसल यदि किसी देश में कार्बन टैक्स लागू किया जाता है तो बहुत सी कंपनियां उन देशों की ओर रूख कर जातीं हैं, जहां इस प्रकार के कर की व्यवस्था नहीं है। जिससे एक ओर जहां राज्य का राजस्व प्रभावित होता है, विकास अवरुध्द होता है वहीं दूसरी ओर टैक्स हैवेन, पोलुशन हैवेन जैसी अवधारणाओं को भी बल मिलता है।

विश्व आर्थिक मंच की एक रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा कार्बन उत्सर्जक देश है। नीति आयोग की एक रिपोर्ट के मुताबिक स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए भारत के कार्बन करों का उपयोग समुचित ढ़ंग से नही हो पा रहा है। गहन ऊर्जा उद्योगों और विश्वस्तर पर भारत को प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए कार्बन करों को कम करने की आवश्यकता है। विश्व बाजार में तेल की बढ़ती कीमतों और देश की ऊर्जा जरूरतों को ध्यान में रखते हुए, भारत का कार्बन करों की नीतियों का पालन करना काफी मुश्किल हो सकता है। दरअसल, कार्बन कर एक ऐसा विचार है जो विकसित राष्ट्रों के लिए कम, लेकिन विकासशील देशों के लिए अधिक चुनौतीपूर्ण होगा। आज भारत को अपनी ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए बड़े स्तर पर निवेश की जरूरत है, मुख्य रूप से बड़े उद्योग व परिवहन क्षेत्र मे अधिक निवेश की आवश्यकता है। कर एवं लाभांश की नीति के अंतर्गत कार्बन कर इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। वैश्विक स्तर पर देश के विकास को गति देने तथा अपनी विकासशील परियोजनाओं से बिना समझौता किये, भारत सहित तमाम विकासशील देशों को इस नीति के बारे में विस्तृत विचार विमर्श करने की जरूरत है। साथ ही विकसित देशों को इस दिशा में पहल करते हुए एक ऐसी वैश्विक नीति बनाने की आवश्यकता है, जो पर्यावरण संरक्षण और उसकी भावी जरूरतों के साथ-साथ अल्पविकसित एवं विकासशील देशों की प्रगति और औद्योगिक विकास के समुचित अवसर उपलब्ध करा सके।

मॉरीशस में तेल रिसाव एक पर्यावरणीय दुर्घटना-2020

श्री पी.जगन,क्षेत्रीय निदेशक,भोपाल
श्री संजय कुमार मुकाती,एस.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय भोपाल

मॉरीशस हिंद महासागर में स्थित अफ्रीका महाद्वीप का एक द्वीप देश है जिनका कुल क्षेत्रफल 2040 वर्गकिलोमीटर है वही उनकी जन संख्या करीब 13 लाख है. मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुइ है जहा पर देश की सबसे ज्यादा आबादी बस्ती है.

मॉरीशस एक एसा देश है जहाँ पर किसी भी तरह का खनिज पदार्थ पाया नहीं जाता है लेकिन फिर भी यह देश पुरे अफ्रीकी महाद्वीप के सबसे विक्सित देशो में से एक माना जाता है. मॉरीशस में हर साल जनवरी से मार्च के बिच में cyclone आता है इसी वजह से वहा घुमने जाने का सबसे अच्छा समय अगस्त से दिस्मबर है. मॉरीशस का प्रति आदमी इनकम सालाना लगभग 17 लाख रुपए है जो भारतीय लोगो की ओसतन इनकम से करीब तिन गुना ज्यादा है मॉरीशस की आय का मुख्य स्त्रोत भी पर्यटक ही है.। मॉरीशस के समुद्रतट की रेत बहोत ही सफ़ेद है जीसके कारन दर्शक वहा पर भारी मात्रा में जाते है।

अभी हाल ही मे 25 जुलाई को एक जापानी जहाज एमवी वाकाशिओ मॉरीशस के दक्षिण पूर्वी समुद्रीतट (चट्टान) से टकराया उसमे 4000 हजार टन कच्चा तेल था और लगभग 800 टन क्रूड ऑइल (तेल) का रिसाव समुद्र हो गया। तथा शेष तेल जहाज को टूटने से पहले उसमें से पंप की मदद से बाहर निकाल लिया गया।जहां यह दुर्घटना हुई वह जगह अपने साफ पनि और जेवविविधता के लिए काफी प्रख्यात है । इससे आसपास के पर्यावरण के लिए काफी लंबे वक्त तक खतरा बना गया और यह बात जापान के विशेषज्ञों द्वारा बताई गयी है ।

अपने देश के समुद्री तटों और खनिज संपदा को बचाने के लिए मॉरीशस के हजारों छात्र, आम लोग और पर्यावरण प्रेमी जुट गए हैं। समुद्र तट के करीब फंसे जापान के पोत से हो रहे तेल रिसाव को रोकने के लिए लोगों ने पूरा प्रयास किया।

तेल रिसाव वाले क्षेत्र के आस पास के द्वीप से कछुओं और अन्य दुर्लभ समुद्री पौधों को सुरक्षित निकाला जा रहा है। हालात को नियंत्रण में लेने के लिए भारत और फ्रांस की ओर से भी मॉरीशस को मदद भेजी गई थी ।विश्व की कुछ सबसे विनाशकारी तेल रिसाव दुर्घटनाये नीचे सूचीबद्ध हैं

<u>तेल रिसाव के पर्यावरणीय प्रभाव:</u>

तेल समुद्रीय पक्षियों के पंखों की संरचना में प्रवेश कर, उनकी रोधक क्षमता को कम कर देता है, इसी प्रकार पक्षी तापमान में होने वाले परिवर्तनों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं तथा पानी में उनकी उत्प्लावकता भी कम हो जाती। उत्प्लावन बल यह पक्षियों की भोजन की तलाश में तथा शिकारियों से बचने के लिए उनकी उड़ान क्षमताओं को भी कम करता है। जब पक्षी चोंच से अपने परों को खुजाते हैं तो परों पर लगा हुआ तेल निगल जाते हैं, जिसके कारण उनके गुर्दे खराब होजाते हैं, यकृत के कार्य भी बदल जाते हैं तथा पाचन तंत्र में जलन होती है।

तेल रिसाव घटना	वर्ष
अमोको कैडिज़ ऑयल स्पिल	1978
द अटलांटिक एम्प्रेस ऑयल स्पिल	1979
कैस्टिलो डे बेल्वर ऑयल स्पिल	1983
Nowruz तेल क्षेत्र में घटनाएं	1983
द मिंगबुलक ऑयल स्पिल	1992
कोल्वा रिवर स्पिल	1994

तेल रिसाव की सफाई और बहाली कठिन है तथा यह रिसाव हुए तेल के प्रकार, पानी के तापमान (वाष्पीकरण एवं जैव निम्नीकरण को प्रभावित करता है) तथा तटरेखाओं और समुद्रतटों की किस्मों जैसे आदि कारकों पर निर्भर करता है

<u>तेल रिसाव के सफाई की विधियां :</u>

- जैविक उपचार द्वारा : तेल का विखंडन करने या हटाने के लिए सूक्ष्मजीवों अथवा जैविक कारकों का उपयोग कर घुलनशील और अघुलनशील दोनों तरह के हाइड्रोकार्बनों के साथ रासायनिक एवं भौतिक बंध बनाने वाला जीवाणुरहित, ओलियोफिलिक, हाइड्रोफोबिक रसायन. जैविक उपचार गतिवर्धक जल में और सतह पर एक समूहीकरण एजेंट के रूप में कार्य करता है, फिनोल और बीटेक्स (BTEX) जेसे विलेयों सहित, जल की सतह पर अणुओं को तैरा कर जैल जैसा जमाव बनाता है।

- नियंत्रित दहन द्वारा : प्रभावी ढंग से पानी में तेल की मात्रा को कम कर सकता है, अगर ठीक से किया जाए लेकिन ऐसा सिर्फ मंद हवा में किया जा सकता है।
- विसर्जक द्वारा : यह एक प्रकार से डिटर्जेंट की तरह कार्य करते हैं, तेल की बूंद के चारों ओर एक गुच्छ बना कर उसे पानी में जाने देते हैं। इस से सतह की सौंदर्यपरकता में सुधार और तेल का उपयोग होता है।
- स्किमिंग द्वारा : इस विधि मे शांत जल की आवश्यकता होती है। स्किमिंग, एक तकनीक जो बूम के उपयोग की तरह है, यह शांत पानी में सबसे प्रभावी है, इसमें विभिन्न तंत्र शामिल हैं जो तेल को पानी से अलग करते हैं और तेल को संग्रह टैंकों में डालते हैं।
- घनीकरण द्वारा : घनीकारक शुष्क हाइड्रोफोबिक बहुलकों से बने होते हैं जो अधिशोषण और अवशोषण दोनों करते हैं। ये रिसे हुए तेल की भौतिक दशा परिवर्तित कर उसे अर्द्ध ठोस या पानी पर तैरने वाले रबर जैसे पदार्थ में बदल कर तेल रिसाव को साफ करता है।

बचाव अथवा उपाय :

- समुद्री भोजन संवेदी प्रशिक्षण- समुद्री भोजन में तेल का पता लगाने के प्रयास में, निरीक्षकों और नियामकों को तेल द्वारा दूषित समुद्री भोजन का सूंघ कर पता लगाने का तथा यह सुनिश्चित करने का कि उपभोक्ताओं तक पहुंचने वाला उत्पाद खाने के लिए सुरक्षित है, प्रशिक्षण दिया जाता है
- द्वित्तीयक रोकथाम - तेल या हाइड्रोकार्बनों के पर्यावरण में मुक्ति को रोकने के संयुक्त उपाय.संयुक्त राज्य अमेरिका पर्यावरण संरक्षण एजेंसी के तेल रिसाव निवारण, नियंत्रण और प्रत्युपाय.

- दोहरे-ढांचे - समुद्रीय जहाजों के ढांचे दोहरे बनाए जाएं जिससे टक्कर या भूसंपर्क पर तेल रिसाव का खतरा और गंभीरता, कम हो सके। मौजूदा एकल ढांचे के जहाजों का भी एक दोहरे ढांचे के साथ पुनर्निर्माण किया जा सकता है।

उपसंहार :

आज विश्व को इस तरह की घटनाओं पर विचार करना होगा और भविष्य मे इन्हे रोकना होगा ताकि समुद्रीय पर्यावरण के खतरे को का किया जाए । तेल रिसाव एक ऐसा प्रदूषण है जो वर्षों तक रहता है और इसके जैवविविधता पर कई तरह के दुष्परिणाम पड़ते है।कई प्रकार के समुद्रीयजीव काल के गाल मे समाजाते है। मॉरीशस को भारत की यह सहायता मानवीय सहायता एवं हिंद महासागर क्षेत्र में आपदा राहत प्रदान करने की उसकी नीति तथा क्षेत्र में सभी की सुरक्षा एवं संवृद्धि के विदेश नीति की दृष्टि के अनुरूप है। तत्काल सहायता भारत और मॉरीशस के बीच मजबूत दोस्ती तथा जरूरत पड़ने पर मॉरीशस के लोगों के प्रति भारत की प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करता है।

अवैध रेत खनन - एक पर्यावर्णीय समस्या

डॉ.आर.पी.मिश्रा, वैज्ञानिक घ क्षेत्रीय निदेशालय,भोपाल
श्री मिलिंद निमजे, वैज्ञानिक ग क्षेत्रीय निदेशालय,भोपाल

बालू हमारे पर्यावरण के संरक्षण के लिये एक महत्त्वपूर्ण खनिज है। यह ज्वारीय तरंगों तथा तूफानों के समक्ष प्रतिरोधी का कार्य करती है। यह कई जलीय तथा उभयचर प्राणियों के लिये आवास तथा प्रजनन का स्थान प्रदान करती है, जिसके कारण बालू तथा मिट्टी का खनन पर्यावरण के लिये समस्या बन गई है, क्योंकि बढ़ते औद्योगीकरण तथा निर्माण कार्यों के कारण बालू की मांग बढ़ती जा रही है।

आबादी बढ़ने के साथ-साथ आवास, स्कूल, अस्पताल, सड़क हों या पेयजल भंडारण से जुड़ी जरूरतें सभी कि निर्माण में रेत, सीमेंट, कंकरीट आदि की मांग तेजी से बढ़ी है। रेत में भी प्राथमिकता में मांग नदियों से निकलने वाली रेत की है। समुद्र की रेत लवणीय होने के कारण और रेगिस्तान की रेत गोल होने व कम खुरदुरी होने के कारण निर्माण के लिए आदर्श नहीं मानी जाती है।

रेत खनन से नदियों की पारिस्थितिकीय प्रणालियों के साथ-साथ तटीय क्षरण, नदी तलहटियों की भू-आकृतीय संरचनाओं में बदलाव मछलियों, घड़ियालों, कछुओं जैसे जलजीवों के आवागमन व प्रजनन क्षेत्रों में अवरोध और आत्मरक्षा के लिए उनके छुपने के क्षेत्रों पर संकट भी आ जाता है। नदी तलहटियों से रेत खनन से नदियों में जल प्रवाह की दशा व गति पर भी असर पड़ता है। आसपास की खेती भी इससे प्रभावित होती है।

अवैध खनन से देश के बहुमूल्य खनिजों की क्षति होती है तथा बदले में यह गंभीर स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संबंधी समस्याएँ उत्पन्न करता है। अवैध खनन की गतिविधियों में शामिल हैं: 1- बिना लाइसेंस के खनन करना 2- लाइसेंस प्राप्त क्षेत्र से बाहर खनन करना 3- स्वीकृत मात्रा से अधिक खनिजों का उत्खनन 4- लाइसेंस का नवीकरण लंबित होने के बावजूद खनन करना।

नदियों में रेत-खनन से होने वाले नुकसान-

- रेत खनन से नदियों का तंत्र प्रभावित होता है तथा इससे नदियों की खाद्य-श्रृंखला नष्ट होती है। रेत के खनन में इस्तेमाल होने वाले सैंड-पंपों के कारण नदी की जैव-विविधता पर भी असर पड़ता है।
- रेत-खनन से नदियों का प्रवाह-पथ प्रभावित होता है। इससे भू-कटाव बढ़ने से भूस्खलन जैसी आपदाओं की आवृत्ति में वृद्धि हो सकती है।
- नदियों में रेत-खनन से निकटवर्ती क्षेत्रों का भू-जल स्तर बुरी तरह प्रभावित होता है। साथ ही भू-जल प्रदूषित होता है।
- प्राकृतिक रूप से पानी को शुद्ध करने में रेत की बड़ी भूमिका होती है। रेत खनन के कारण नदियों की स्वतः जल को साफ कर सकने की क्षमता पर दुष्प्रभाव पड़ रहा है।
- अवैध रेत खनन से सरकारी खज़ाने को प्रतिवर्ष हज़ारों करोड़ रुपए का नुकसान हो रहा है।

नदी से खनन होने वाली रेत के विकल्प के रूप मे क्रश्ड सैंड का उपयोग किया जा सकता है यह पर्यावरण के लिए भी सुरक्षित है। विभिन्न चट्टानों, खदानों के पत्थरों को मशीनों की मदद से बारीक तोड़कर क्रश्ड सैंड बनाई जाती है। नदी की रेत की तुलना में क्रश्ड सैंड के निम्नलिखित फायदे हैं -

- क्रश्ड सैंड में नमी नहीं होती है, जबकि नदी की रेत में नमी होती है जो कंक्रीट की मिक्स डिज़ाईन के मानक और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करती है।
- क्रश्ड सैंड कंक्रीट को उच्च स्थायित्व और शक्ति प्रदान करती है। क्रश्ड सैंड की संकुचन शक्ति (compressive strength) अधिक होती है।
- क्रश्ड सैंड में सिल्ट नहीं होता, जबकि नदी की रेत में सिल्ट पाया जाता है, जिसे वॉशिंग की ज़रूरत होती है।
- कृत्रिम रूप से नियंत्रित परिस्थितियों में तैयार किये जाने के कारण क्रश्ड सैंड में सभी समान आकार के कण होते हैं, जबकि नदी की रेत में असमान आकार के कण होते हैं, जिन्हें पृथक करना पड़ता है।

- यदि क्रश्ड सैंड निर्माण के लिये पर्याप्त मात्रा में प्लांट स्थापित कर दिये जाएँ तो यह नदी की रेत की अपेक्षा सस्ता विकल्प है।

उपरोक्त कारणों से स्पष्ट है कि नदी की रेत की अपेक्षा क्रश्ड सैंड तुलनात्मक रूप से सस्ती और अधिक मज़बूती देती है। केरल व तमिलनाडु जैसे राज्यों ने नदियों से रेत-खनन को पूरी तरह प्रतिबंधित कर निर्माण कार्यों में क्रश्ड सैंड का इस्तेमाल अनिवार्य कर दिया है। नदियों में रेत-खनन से होने वाली पर्यावरणीय क्षति का यही एक स्थायी विकल्प है।

राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (NGT) ने काफी पहले ही देश की किसी भी नदी से लाइसेंस या पर्यावरण मंज़ूरी के बिना रेत के खनन पर रोक लगा दी थी, परंतु नदियों में अब भी अवैध रेत-खनन जारी है।

इस बीच नदियों में रेत खनन के मामले को समग्रता में समझने का एक अवसर एनजीटी का एक हालिया निर्देश देता है। अप्रैल, 2019 में आंध्र प्रदेश सरकार पर अवैध रेत खनन रोकने में असमर्थ रहने पर कुछ निर्देशों के साथ सौ करोड़ रुपए का अंतरिम दंड भी लगाया गया था। राज्य के मुख्य सचिव को अनियमित रेत खनन पर तुरंत रोक लगाने के आदेशों के साथ-साथ यह भी चेताया गया था कि राज्य प्राकृतिक संसाधनों का ट्रस्टी है व उन्हें पूर्ण संरक्षण प्रदान करना उसकी जिम्मेदारी है। निस्संदेह एनजीटी यह भी जानता है कि रेत खनन का अवैध करोबार पूरे देश में आपराधिक तत्वों और माफियाओं के कब्जे में है और उसके पहले के निर्देश भी विभिन्न राज्यों में दिखावे के लिए स्वीकारें जाते हैं।

दरअसल, विरोध रेत के अवैध खनन को लेकर है। लेकिन जिन पहलुओं को एनजीटी ने छुआ है वे वैध खनन पर भी समान रूप से लागू होते हैं। पर्यावरण प्रभाव और ट्रस्टीशिप संबंधी चिंता वैध और अवैध दोनों मामलों में प्रासंगिक है। वैध खनन पर तो निगरानी रखनी और भी आवश्यक है, क्योंकि भारी मात्रा में अवैध खनन, कानून की ही आड़ में होता है। स्वीकृत गहराइयों से दुगनी-तिगुनी गहराइयों तक पहुंच कर रेत खनन किया जाता है। जिन चिन्हित क्षेत्रों के एि रेत खनन पट्टा होता है उनसे बाहर जाकर भी खनन होता है।

बालू खनन के विनियमन की चुनौती को देखते हुए पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने धारणीय दिशा-निर्देश जारी किये हैं। इसमें नदी के बालू का धारणीय रूप से खनन सुनिश्चित करने के लिये एक विस्तृत कार्यक्रम की बात की गई है। लघु खनिजों जिसमें बालू तथा बजरी भी शामिल है, के लिये 5 एकड़ तक के खनन लीज के लिये पर्यावरण संबंधी मंज़ूरी जिलाधिकारी की अध्यक्षता वाले ज़िला पर्यावरण प्रभाव आकलन प्राधिकरण द्वारा दी जाएगी।

व्यक्तिगत उपयोग तथा छोटे स्तर पर परंपरागत व्यावसायिक कार्यों के लिये कुम्हारों इत्यादि को पर्यावरण मंज़ूरी से छूट दी गई है। बाढ़ के बाद खेतों में जमा बालू हटाने को खनन कार्य नहीं माना जाएगा तथा इसके लिये किसी पर्यावरण मंज़ूरी की आवश्यकता नहीं होगी। खनिजों के संरक्षण के लिये आवश्यक उपायों की पहचान करना, अवैध खनन के लिये सुरक्षात्मक कदम उठाना तथा वैज्ञानिक खनन पद्धति की पहचान करना इत्यादि।

निष्कर्षः

इन दिशा-निर्देशों का मूल उद्देश्य खनिजों का संरक्षण, अवैध खनन की रोकथाम के लिये सुरक्षात्मक कदम उठाना, बालू और बजरी को कानूनी रूप से पर्यावरण हेतु धारणीय और सामाजिक रूप से उत्तरदायी तरीके से सुनिश्चित करना, निकाले गए खनिज की निगरानी व परिवहन की प्रभावशीलता में सुधार करना, नदी की साम्यावस्था एवं इसके प्राकृतिक पर्यावरण के लिये पारिस्थितिकी तंत्र के जीर्णोद्धार तथा प्रवाह को सुनिश्चित करना, तटवर्ती क्षेत्रों के अधिकारों तथा आवास की पुर्नस्थापना और पर्यावरण मंज़ूरी की प्रक्रिया को मुख्यधारा में शामिल करना है। दिशा-निर्देश आशाजनक हैं बस इनके प्रभावी क्रियान्वयन के लिये राजनीतिक मशीनरी की इच्छाशक्ति, सख्त विनियमन के साथ-साथ विभिन्न हितधारकों को शामिल किये जाने की आवश्यकता है।

आर्द्रभूमि - एक परिचय

डॉ. दिलीप मार्केण्डेय वैज्ञानिक ई
जैव प्रयोगशाला दिल्ली

नदियों, झीलों, समुद्रों, जंगलों और पहाड़ों में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के पादपों एवं जीवों (समृद्ध जैव-विविधता) को देखकर हम रोमांचित हो उठते हैं। जब जल एवं स्थल दोनों स्थानों पर समृद्ध जैव-विविधता देखने को मिलती है तो सोचने वाली बात यह है कि जिस स्थान पर जलीय एवं स्थलीय जैव-विविधताओं का मिलन होता है वह जैव-विविधता की दृष्टि से अपने आप में कितना समृद्ध होगा दरअसल वेटलैंड (आर्द्रभूमि) एक विशिष्ट प्रकार का पारिस्थितिकीय तंत्र है तथा जैव-विविधता का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। जलीय एवं स्थलीय जैव-विविधताओं का मिलन स्थल होने के कारण यहाँ वन्य प्राणी प्रजातियों व वनस्पतियों की प्रचुरता पाए जाने की वज़ह से वेटलैंड समृद्ध पारिस्थितिकीय तंत्र है।आज के आधुनिक जीवन में मानव को सबसे बड़ा खतरा जलवायु परिवर्तन से है और ऐसे में यह ज़रूरी हो जाता है कि हम अपनी जैव-विविधता का सरंक्षण करें।

वर्ष 2017 में आर्द्रभूमियों के सरंक्षण के लिये वेटलैंड्स (सरंक्षण एवं प्रबंधन नियम) 2017 नामक एक नया वैधानिक ढाँचा बनाया गया है।

नमी या दलदली भूमि वाले क्षेत्र को आर्द्रभूमि या वेटलैंड (Wetland) कहा जाता है। दरअसल, वेटलैंड्स वैसे क्षेत्र हैं जहाँ भरपूर नमी पाई जाती है और इसके कई लाभ भी हैं।आर्द्रभूमि जल को प्रदूषण से मुक्त बनाती है। आर्द्रभूमि वह क्षेत्र है जो वर्ष भर आंशिक रूप से या पूर्णतः जल से भरा रहता है।भारत में आर्द्रभूमि ठंडे और शुष्क इलाकों से लेकर मध्य भारत के कटिबंधीय मानसूनी इलाकों और दक्षिण के नमी वाले इलाकों तक फैली हुई है।

बायोलॉजिकल सुपर मार्केट : वेटलैंड्स को बायोलॉजिकल सुपर-मार्केट कहा जाता है, क्योंकि ये विस्तृत भोज्य-जाल (food-webs) का निर्माण करते हैं। फूड-वेब्स

यानी भोज्य- जाल में कई खाद्य श्रृंखलाएँ शामिल होती हैं और ऐसा माना जाता है कि फूड-वेब्स पारिस्थितिक तंत्र में जीवों के खाद्य व्यवहारों का वास्तविक प्रतिनिधित्व करते हैं। एक समृद्ध फूड-वेब समृद्ध जैव-विविधता का परिचायक है और यही कारण है कि इसे बायोलॉजिकल सुपर मार्केट कहा जाता है।

किडनीज ऑफ द लैंडस्केप: वेटलैंड्स को 'किडनीज़ ऑफ द लैंडस्केप' यानी 'भू-दृश्य के गुर्दे' भी कहा जाता है।जिस प्रकार से हमारे शरीर में जल को शुद्ध करने का कार्य किडनी द्वारा किया जाता है, ठीक उसी प्रकार वेटलैंड तंत्र जल-चक्र द्वारा जल को शुद्ध करता है और प्रदूषणकारी अवयवों को निकाल देता है। जल-चक्र पृथ्वी पर उपलब्ध जल के एक रूप से दूसरे में परिवर्तित होने और एक भंडार से दूसरे भंडार या एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने की चक्रीय प्रक्रिया है। जलीय चक्र निरंतर चलता है तथा स्रोतों को स्वच्छ रखता है और इसके अभाव में जीवन असंभव है।

उपयोगी वनस्पतियों एवं औषधीय पौधों के उत्पादन में सहायक: वेटलैंड्स जंतु ही नहीं बल्कि पादपों की दृष्टि से भी एक समृद्ध तंत्र है, जहाँ उपयोगी वनस्पतियाँ एवं औषधीय पौधे भी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। अतः ये उपयोगी वनस्पतियों एवं औषधीय पौधों के उत्पादन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

लोगों की आजीविका के लिये महत्त्वपूर्ण: दुनिया की तमाम बड़ी सभ्यताएँ जलीय स्रोतों के निकट ही बसती आई हैं और आज भी वेटलैंड्स विश्व में भोजन प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।वेटलैंड्स के नज़दीक रहने वाले लोगों की जीविका बहुत हद तक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इन पर निर्भर होती है।

पर्यावरण सरंक्षण के लिये महत्त्वपूर्ण: वेटलैंड्स ऐसे पारिस्थितिकीय तंत्र हैं जो बाढ़ के दौरान जल के आधिक्य का अवशोषण कर लेते हैं।इस तरह बाढ़ का पानी झीलों एवं तालाबों में एकत्रित हो जाता है, जिससे मानवीय आवास वाले क्षेत्र जलमग्न होने से बच जाते हैं।इतना ही नहीं 'कार्बन अवशोषण' व 'भू जल स्तर' में वृद्धि जैसी

महत्त्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहन कर वेटलैंड्स पर्यावरण संरक्षण में अहम योगदान देते हैं।

वेटलैंड्स सरंक्षण के अंतर्राष्ट्रीय प्रयास:

रामसर कन्वेंशन- रामसर वेटलैंड्स कन्वेंशन एक अंतर-सरकारी संधि है, जो वेटलैंड्स और उनके संसाधनों के संरक्षण और बुद्धिमतापूर्ण उपयोग के लिये राष्ट्रीय कार्य और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का ढाँचा उपलब्ध कराती है।2 फरवरी, 1971 को विश्व के विभिन्न देशों ने ईरान के रामसर में दुनिया के वेटलैंड्स के संरक्षण हेतु एक संधि पर हस्ताक्षर किये थे, इसीलिये इस दिन विश्व वेटलैंड्स दिवस का आयोजन किया जाता है।वर्ष 2015 तक के आँकड़ों के अनुसार, अब तक 169 देश रामसर कन्वेंशन के प्रति अपनी सहमति दर्ज़ करा चुके हैं जिनमें भारत भी है। वर्तमान में विश्व स्तर पर 2200 से अधिक वेटलैंड्स हैं, जिन्हें अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के वेटलैंड्स की रामसर सूची में शामिल किया गया है और इनका कुल क्षेत्रफल 2.1 मिलियन वर्ग किलोमीटर से भी अधिक है।रामसर कन्वेंशन में शामिल होने वाली सरकारें वेटलैंड्स को पहुँची हानि और उनके स्तर में आई गिरावट को दूर करने के लिये सहायता प्रदान करने हेतु प्रतिबद्ध होती हैं।

विश्व आर्द्रभूमि दिवस पहली बार 2 फरवरी, 1997 को मनाया गया था। वर्ष 2019 के लिये विश्व आर्द्रभूमि दिवस की थीम 'आर्द्रभूमि और जलवायु परिवर्तन' थी। आर्द्रभूमि/वेटलैंड्स पर रामसर अभिसमय/कन्वेंशन की स्थायी समिति द्वारा अगले दो वर्षों 2020 और 2021 के लिये स्वीकृत की गई थीम्स हैं-

2020- आर्द्रभूमि और जैव-विविधता

2021- आर्द्रभूमि और जल

राष्ट्रीय वेटलैंड संरक्षण कार्यक्रम-

सरकार ने वर्ष 1986 के दौरान संबंधित राज्य सरकारों के सहयोग से राष्ट्रीय वेटलैंड संरक्षण कार्यक्रम शुरू किया था।इस कार्यक्रम के अंतर्गत पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा 115 वेटलैंड्स की पहचान की गई थी, जिनके संरक्षण और प्रबंधन हेतु पहल करने की ज़रूरत है।इस योजना का उद्देश्य देश में वेटलैंड्स के संरक्षण और

उन्का बुद्धिमतापूर्ण उपयोग करना है, ताकि उनमें आ रही गिरावट को रोका जा सके।

आर्द्रभूमि (संरक्षण एवं प्रबंधन) नियमावली, 2017-

विदित हो कि वर्ष 2017 में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा वेटलैंड्स के सरंक्षण से संबंधित नए नियमों को अधिसूचित किया गया है। आर्द्रभूमि (संरक्षण एवं प्रबंधन) नियमावली, 2017 पहले के दिशा-निर्देशों का स्थान लेगी, जो 2010 में लागू हुए थे।

और अंत में.....

दरअसल, देश में मौजूद 26 वेटलैंड्स को ही संरक्षित किया गया है, लेकिन ऐसे हज़ारों वेटलैंड्स हैं जो जैविक और आर्थिक रुप से महत्त्वपूर्ण तो हैं लेकिन उनकी कानूनी स्थिति स्पष्ट नहीं है। हालाँकि, नए नियमों में एक स्पष्ट परिभाषा देने का प्रयास किया गया है।वेटलैंड्स योजना प्रबंध और निगरानी संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क के अंतर्गत आते है। हालाँकि अनेक कानून वेटलैंड को संरक्षित करते हैं, लेकिन इनकी पारिस्थितिकी के लिये विशेष रूप से कोई कानून नहीं है।इनके लिये समन्वित पहुँच आवश्यक है, क्योंकि ये बहु-उद्देश्यीय उपयोगिता हेतु आम संपत्ति हैं और इनका संरक्षण और प्रबंधन करना सभी की ज़िम्मेदारी है।वैज्ञानिक जानकारी योजनाकारों को आर्थिक महत्त्व और लाभ समझाने में मदद करेगी। अतः वेटलैंड्स के वैज्ञानिक महत्त्व के प्रति नीति-निर्माताओं को जागरूक बनाना होगा।जहाँ तक जागरूकता का प्रश्न है तो आम जनता को भी इन वेटलैंड्स के संरक्षण के प्रति जागरूक बनाए जाने की ज़रूरत है। नए नियमों में वेटलैंड्स प्रबंधन के प्रति विकेंद्रीकृत दृष्टिकोण अपनाया गया है, ताकि क्षेत्रीय विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके और राज्य अपनी प्राथमिकताओं को निर्धारित कर सकें।ज़्यादातर निर्णय राज्य के आर्द्रभूमि प्राधिकरण द्वारा लिये जाएंगे, जिसकी निगरानी राष्ट्रीय वेटलैंड समिति द्वारा की जाएगी। इस प्रकार की व्यवस्था सहकारी संघवाद की भावना को मज़बूत करती है।

प्लास्टिक एक आवश्यक प्रदूषक व इसका प्रबंधन

श्री शशिकांत लोखण्डे, वैज्ञानिक ई क्षेत्रीय निदेशालय,पूना
श्री नृपेन्द्र सेमवाल, वैज्ञानिक ग क्षेत्रीय निदेशालय,वडोदरा

हमारे समुद्र तटों, जलमार्गों, वनों और यहाँ तक कि पहाड़ों पर भी पाए जाने वाले प्लास्टिक अपशिष्ट की भारी मात्रा पर ध्यान केंद्रित करने हेतु संयुक्त राष्ट्र ने 5 जून 2018 को विश्व पर्यावरण दिवस के लिये “प्लास्टिक प्रदूषण को हराओ" (beat plastic pollution) विषय को चुना।

प्लास्टिक प्रदूषण पर्यावरण में अपशिष्ट प्लास्टिक सामग्री के संचय के कारण होता है। प्लास्टिक एक गैर-बायोडेग्रेडेबल पदार्थ है। यह मिट्टी या पानी में अपघटित नहीं होता है और जलाने पर इसका पर्यावर्णीय प्रभाव और भी विनाशकरी होता है, ऐसे में इसे ख़त्म करना एक चुनौती है। यह सैकड़ों वर्षों तक पर्यावरण में रहता है और वायु, जल और भूमि प्रदूषण का कारक बनता है।

यह इंसानों, जानवरों के साथ-साथ पौधों के लिए भी खतरनाक है। हर साल प्लास्टिक प्रदूषण के कारण कई जानवर, पक्षी और समुद्री जीव मर जाते हैं। प्लास्टिक की प्लेटें, बैग, चम्मच, चश्मा और अन्य सामग्री बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं। ये किफायती और उपयोग में आसान हैं इसलिए लोग सभाओं और पार्टियों के दौरान इन उपयोग और फेंकने वाले बर्तनों का उपयोग करना पसंद करते हैं क्योंकि यह बाद में बर्तनों को साफ करने परेशानी को दूर करता है। बस उन्हें इन सबको इकट्ठा करके फेंकने की जरूरत है। हालांकि, बहुत कम लोगों को पता है कि इस कचरे का निपटान इतनी आसानी से नहीं किया जा सकता है। यह पर्यावरण में बना रहता है और हमें प्रतिकूल रूप से नुकसान पहुंचाता है।

कोविड- 19 एक ऐसी समस्या है जिसने हमारा पूरा ध्यान खींच रखा है। हालात ऐसे हो चुके हैं कि हम उन चीजों के बारे में बेखबर हो चले हैं जो हमारे भूतकाल का हिस्सा होने के साथ साथ हमारे भविष्य के निर्माण के लिए भी जिम्मेदार हैं। हमारे जीवन में ऐसा ही एक मुद्दा है प्लास्टिक का। वर्तमान में चल

रही स्वास्थ्य आपातकाल जैसी स्थिति ने प्लास्टिक के उपयोग को सामान्य कर दिया है क्योंकि हम वायरस के खिलाफ सुरक्षा उपायों के रूप में इसे अधिक से अधिक उपयोग करते हैं। दस्ताने, मास्क से लेकर बॉडी सूट तक जैसे प्लास्टिक प्रोटेक्शन गियर कोविड-19 के खिलाफ इस युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका अवश्य निभा रहे हैं लेकिन अगर इस प्लास्टिक कचरे को ठीक से नियंत्रित एवं प्रबंधित नहीं किया गया तो यह हमारे शहरों के कूड़े के पहाड़ों की संख्या में इजाफा ही करेगा।

हाल ही मे राष्ट्रीय हरित अधिकरण ने भी प्लास्टिक के सही प्रबंधन ना होने पर राज्य सरकारों को निर्देश प्रदान किए हैं, अधिकरण के हाल ही के निर्णय मे ऑनलाइन व्यापार करने वाली कंपनी जैसे अमेज़न, फ्लिपकार्ट आदि पर भी अत्याधिक प्लास्टिक पेकिंग करने के कारण जुर्माना लगाने के आदेश जारी किए हैं।

प्लास्टिक उत्पादनः उपयोगी संसाधनो का दोहन

प्लास्टिक के निस्तारण के साथ-साथ ही इसका उत्पादन भी उतनी ही गंभीर समस्या है। प्लास्टिक के निर्माण में कई तरह के जीवाश्म ईंधनो जैसे की तेल और पेट्रोलियम आदि का उपयोग किया जाता है। यह जीवाश्म ईंधन गैर-नवकरणीय संसाधन होते है और इन्हे प्राप्त करना भी काफी कठिन होता है, इन जीवाश्म ईंधनो को निकालने में काफी निवेश और संसाधनो की आवश्यकता होती है।

समुद्री जीवनः प्लास्टिक प्रदूषण से सबसे बुरी तरह से प्रभावित

प्लास्टिक बैग और अन्य प्लास्टिक के कण हवा तथा पानी द्वारा समुद्रो, महासागरों और अन्य पानी के स्रोतों में मिल जाते है। वह लोग जो पिकनिक और कैपिंग के लिये जाते है, उनके द्वारा भी जल स्त्रोतों के निकट प्लास्टिक बोतलो और पैकटो के द्वारा प्लास्टिक प्रदूषण फैलाया जाता है। यही सारा प्लास्टिक नदीयों और समुद्रों में पहुंच जाता है, जिससे समुद्री जीवो के लिये एक गंभीर संकट उत्पन्न हो जाता है, क्योकि इन जीवो द्वारा इस प्लास्टि को अपना भोजन समझकर खा लिया जाता है। जिससे मछलियों, कछुओं और अन्य समुद्री जीवो के स्वास्थ्य पर गंभीर

संकट उत्पन्न हो जाता है। प्रतिवर्ष कई समुद्री जीव इसी प्लास्टिक प्रदूषण की समस्या के कारण अपना जीवन खो देते है।

प्लास्टिक प्रदूषणः मानव और पशुओं के लिये एक खतरा

समुद्री जीवो की तरह ही, आवारा पशुओं द्वारा भी कूड़े में इधर-उधर बिखरे प्लास्टिक को भोजन समझकर खा लिया जाता है। कई बार इन पशुओं द्वारा काफी अधिक मात्रा में प्लास्टिक में खा लिया जाता है जोकि उनके आंतो में फंस जाता है, जिससे की उनकी मृत्यु तक हो जाती है। प्लास्टिक से उत्पन्न हुआ कचरा हमारे नदियों तथा पीने के पानी के अन्य स्रोतों को भी दूषित कर रहा है।

प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन के लिये कानूनी प्रावधान

- प्लास्टिक अपशिष्ट में हो रही वृद्धि के कारणों में कानूनों का उचित रूप से क्रियान्वयन न किया जाना एक प्रमुख कारण है। प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियमों को पहली बार वर्ष 2011 में पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया था।
- इन नियमों में अपशिष्ट एकत्रित करने की ज़िम्मेदारी राज्य निगरानी समितियों की देखरेख में शहरी स्थानीय निकायों पर डाली गई।
- इन नियमों में प्लास्टिक बैग की मोटाई के लिये एक मानक निर्धारित किया गया और खुदरा विक्रेताओं द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले बैग के लिये शुल्क वसूलना अनिवार्य कर दिया गया।
- 2016 में ये नियम कई पहलुओं में अधिक प्रभावी किए गए। सबसे महत्त्वपूर्ण पहल विस्तारित उत्पादकों की ज़िम्मेदारी (ईपीआर) की शुरुआत थी जहाँ निर्माताओं को उनके द्वारा उत्पादित अपशिष्ट को इकट्ठा करने की आवश्यकता थी। उदाहरण के लिये, एक कोल्ड ड्रिंक निर्माता को पीईटी बोतल वापस लेनी होगी।
- इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि निर्माताओं और प्लास्टिक वाहक बैग या बहु-स्तरीय पैकेजिंग का आयात करने वालों से ईपीआर के हिस्से के रूप में

शुल्कों का संग्रह अनिवार्य था। फलस्वरूप इससे स्थानीय प्राधिकरणों की वित्तीय स्थिति मज़बूत होगी और प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों को बढ़ावा मिलता।

- लेकिन 2018 में नियमों में कुछ फेरबदल देखे गए, जो इन्हें थोड़ा लचर बनाते हैं। इसलिये, धारा 9 (3) के तहत अधिसूचित नियमों में, 'गैर-पुनर्चक्रण योग्य एमएलपी' शब्द को 'एमएलपी' द्वारा प्रतिस्थापित किया गया जो कि गैर-पुनर्चक्रण योग्य या गैर-ऊर्जा प्राप्ति योग्य है और जिसका कोई वैकल्पिक उपयोग नहीं है। कैरी बैग की कीमतों से संबंधित धारा 15 को भी छोड़ दिया गया है।

- इसके अतिरिक्त, एक विक्रेता को अब शहरी स्थानीय निकाय को शुल्क का भुगतान करने या इसमें पंजीकरण कराने की आवश्यकता नहीं रही। इसकी बजाय, एक केंद्रीकृत पंजीकरण प्रणाली शुरू करने की योजना है जहाँ दो से अधिक राज्यों में काम करने वाले उत्पादकों को केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के साथ पंजीकरण कराना होगा।

प्लास्टिक प्रदूषण से निपटने के लिये सामूहिक प्रयास

प्लास्टिक पदार्थो का निस्तारण करना काफी चुनौतिपूर्ण कार्य है। जब प्लास्टिक का कचरा लैंडफिल मे ना जाकर, पानी के स्रोतों में पहुंच जाता है तब यह एक गंभीर संकट बन जाता है। लकड़ी और कागज की तरह हम इसका दहन करके भी इसे समाप्त नही कर सकते। क्योंकि प्लास्टिक के दहन से इससे कई सारी हानिकारक गैसे उत्पन्न होती है, जोकि पृथ्वी के वातावरण और जनजीवन के लिये काफी हानिकारक हैं। इस वजह से प्लास्टिक वायु, जल तथा भूमि तीनो तरह के प्रदूषण फैलाता है।

हम चाहे जितना भी प्रयास कर ले परन्तु प्लास्टिक उत्पादो के उपयोग को पूर्ण रुप से बंद या प्रतिबंधित नही कर सकते पर हम चाहे तो निश्चित रुप से इसके उपयोग को कम जरुर कर सकते है। प्लास्टिक से बने कई उत्पाद जैसे कि प्लास्टिक बैग, डिब्बे, ग्लास, बोतल, आदि की जगह हम आसनी से पर्यावरण के अनुकूल अन्य

उत्पादो जैसे कि कपड़े, पेपर बैग, स्टील से बने बर्तनो और अन्य चीजो का उपयोग कर सकते है।

कुछ विकल्पों की सूची दी गई है, जो इस समस्या को हल करने मे सहायक हो सकते हैं, हालाँकि कुछ परीक्षण अभी भी किये जा रहे हैं।

- पहला विकल्प है अल्पकालिक उपयोग वाले उत्पादों के लिये थोड़ा महँगे, बायो-आधारित और बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक का उत्पादन करना जो स्टार्च, सेलुलोज़ और पॉलिलेक्टिक एसिड का कच्चे माल के रूप में उपयोग करता है।
- दूसरा विकल्प वस्तुतः उन तकनीकों का उपयोग करके प्लास्टिक के पुनर्चक्रण से संबंधित है जिनके माध्यम से कच्चे माल की दूसरी आपूर्ति श्रृंखला का उत्पादन किया जा सकता है।
- शोध के तहत तीसरा विकल्प अपशिष्ट प्लास्टिक से ईंधन उत्पन्न करना है।
- चौथा विकल्प गैर-पुनर्चक्रण योग्य प्लास्टिक अपशिष्ट के लिये अन्य उपयोगी अनुप्रयोगों को ढूँढना है। वर्तमान में इसको बिटुमिन के साथ मिलाकर सीमेंट भट्टियों में और सड़कों को बिछाने के लिये उपयोग किया जा रहा है।

ये विकल्प धीरे-धीरे हमारी समस्या को कम कर सकते है और प्लास्टिक के प्रति हमारे आकर्षण को भी कम कर सकते हैं; इसलिए हमें छोटे-छोटे कदम उठाकर प्लास्टिक प्रदूषण को कम करने में योगदान देना चाहिए। यह वह समय है जब हम कुछ निवारक कदम उठाकर अपने भविष्य की पीढ़ियों के लिए बेहतर जीवन सुनिश्चित कर सकते है।

ककरेठा, आगरा स्थित आद्र-भूमि (wet land) पर नालों के अपशिष्ट जल का जैव-निदान Phytoremediation यथा-स्थान (in-situ): एक अध्ययन

श्री कमल कुमार, वैज्ञा. घ एवं प्रभारी अधिकारी, आगरा
डॉ. विपुल कुमार सिंह, वरि॰वैज्ञा॰सहा॰ आगरा

पृष्ठभूमि:

आगरा शहर यमुना नदी के किनारे बसा हुआ है, यह नदी शहर की विभिन्न आवश्यकताओं एवं पेय-जलापूर्ति हेतु एक मुख्य स्रोत है। यमुना नदी, गंगा नदी की दूसरी सबसे बड़ी सहायक नदी है तथा लाखों लोग आवश्यकताओं के लिए इसके जल पर निर्भर हैं। यह नदी विभिन्न मछलियों, कछुओं, घड़ियालों तथा अन्य जलचरों एवं कई प्रकार के जलीय पादपों और पादप प्लवकों का घर है। वर्तमान में यमुना नदी में विभिन्न स्रोतों तथा माध्यमों द्वारा बिना उपचारित करे हुए अपशिष्ट जल निस्तारित किया जाता है, जो इन जीवों एवं पादपों पर बहुत बुरा प्रभाव डालता है। बड़ी मात्रा में भारी धातुएँ जैसे क्रोमियम, मर्करी एवं आर्सेनिक तथा विभिन्न कीटनाशक, रासायनिक उर्वरक आदि यमुना नदी के जल में पाये गये हैं जो की जीवों के लिए अत्यधिक हानिकारक हैं।

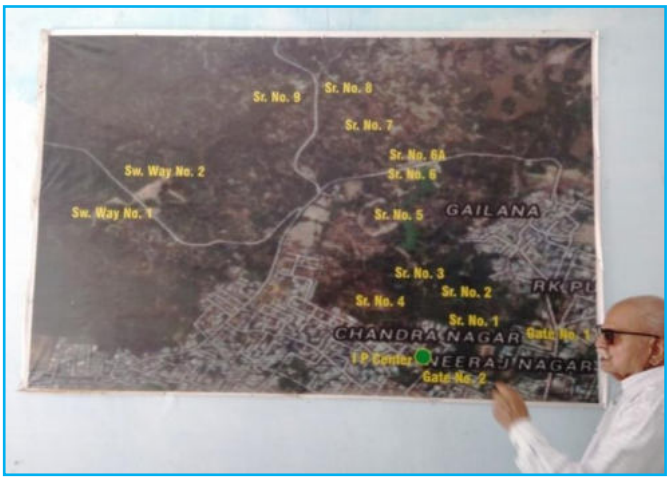

जैव-निदान (यथा-स्थान) **Phytoremediation (in-situ):** शहरों से निकले हुए अपशिष्ट जल के उपचार हेतु मलजल उपचार संयंत्र (**sewage treatment plant**) स्थापित किए जाते हैं। वर्तमान में आगरा शहर में विभिन्न तकनीकों पर आधारित ऐसे कुल 08 संयंत्र स्थापित हैं। इन मलजल उपचार संयंत्रो की स्थापना एवं रखरखाव का व्यय अत्यधिक होता है जिस कारण से प्राकृतिक तरीकों जैसे जैविक/पादप विधियों द्वारा **stabilization pond** एवं यथा-स्थान जैव-निदान माध्यम को प्रयोग किया जा सकता है।

आगरा शहर में कार्यरत कुछ समाजसेवियों (श्री रमन, सदस्य-अनुश्रवण समिति, माननीय सर्वोच्च न्यायालय), वन विभाग, जिला प्रशासन-आगरा आदि के सहयोग एवं

प्रयासों से वर्ष 2009 में ककरेठा नामक स्थान पर यह परियोजना शुरू की गई। वन विभाग, आगरा की जमीन पर स्थित आद्र-भूमि का चुनाव कर 08 न॰ नालों का बहाव (लगभग 7-8 MLD) परियोजना स्थल की तरफ मोड़ा गया। इस अपशिष्ट जल के बहाव को एक क्रम में बनाए गए 09 न॰ चेक डैम, 09 न॰ कुंडों एवं पादप/पत्थरों की रुकावटों से होकर गुजारा गया। परियोजना स्थल की ऊँचाई यमुना नदी के तल से लगभग 17-18 मीटर पर है अतः यह अपशिष्ट जल गुरुत्वाकर्षण बल द्वारा इन रुकावटों से होते हुए बहता है। चेक डैम मे स्थित बोल्डरों (पत्थर), खनिज फिल्टरों एवं पादपों/घास के बैरियर से तैरती एवं निलंबित अशुद्धि दूर हो जाती है। इसके अतिरिक्त वन भूमि से गुजरते हुए जल द्वारा क्षेत्र की सिंचाई हो जाती है तथा आद्र वातावरण कायम रहता है। इस परियोजना के प्रारंभ होने के लगभग 02 वर्ष पश्चात ही परियोजना स्थल के चारों ओर विभिन्न वनस्पतियों का उद्भव हो गया था, वर्तमान में यहाँ पर बांस का झुरमुट, विभिन्न औषधीय पौधे स्थित हैं जिनमे निरंतर वृद्धि हो रही है। अपशिष्ट जल की अशुद्धियाँ दूर हो रही हैं तथा परियोजना के अंतिम निस्तारण बिन्दु पर जल की गुणवत्ता बढ़ जाती है।

ककरेठा, आगरा वन क्षेत्र स्थित परियोजना के विभिन्न स्तर

उपरोक्त परियोजना को विभिन्न स्तर पर सराहा गया है तथा विभिन्न गणमान्य व्यक्तियों द्वारा परियोजना स्थल का दौरा/निरीक्षण किया गया है। परियोजना के मुख्य बिन्दु/उपलब्धियाँ निम्नवत हैं:

परियोजना प्रारंभ से पहले ***एक वर्ष पश्चात***

(औषधीय पौधों, पशुओं के चारे तथा बांस के झुरमुट का विकास

- अपशिष्ट जल द्वारा वन क्षेत्र में सिंचाई

- शून्य लागत। बिना बिजली, रसायन एवं मानव हस्तक्षेप के
- आस पास के क्षेत्र में भूगर्भ जल स्तर में वृद्धि

परियोजना कार्यालय, आगरा द्वारा ककरेठा, आगरा स्थित आद्र-भूमि (**wet land)** पर नालों के अपशिष्ट जल का जैव-निदान (यथा-स्थान) परियोजना का अध्ययन किया गया। दिनांक 02.02.2020 को परियोजना स्थल के विभिन्न स्तरों पर स्थित कुंडों से अपशिष्ट जल के नमूने लिए गए एवं नमूनों को विश्लेषण हेतु के॰प्र॰नि॰बो॰, क्षे॰नि॰(उ) लखनऊ स्थित प्रयोगशाला प्रेषित किया गया। विश्लेषण आख्या निम्नानुसार है:

रासायनिक विश्लेषण के परिणाम:

क्र.स.	पैरामीटर	इनलेट (प्रथम स्तर)	मध्यम (तृतीय स्तर)	आउटलेट (अंतिम स्तर)	% उन्नति
1	pH	7.5 (Temp.-17.5 ^{o}C)	7.63 (Temp.-17.5 ^{o}C)	7.82 (Temp.-17.2 ^{o}C)	-
2	SS, mg/l	219	46.4	37.9	83
5	NH_4-N, mg/l	37.4	36.0	40.4	-8
6	COD, mg/l	296	144	107	64
7	BOD, mg/l	142	50.9	37.7	73
8	Total Coliform (MPN/100ml)	--	--	$1.7x10^5$	-
9	Fecal Coliform (MPN/100ml)	--	--	$7.8x10^4$	-

निष्कर्ष:

ककरेठा, आगरा स्थित आद्र-भूमि (wet land) पर नालों के अपशिष्ट जल का जैव-निदान (यथा-स्थान) परियोजना से प्राप्त परिणाम बताते हैं कि विभिन्न स्तरों से गुजरते हुए अपशिष्ट जल कि गुणवत्ता में अत्यधिक सुधार होता है, परंतु अंतिम निस्तारित जल नमूने की गुणवत्ता मानकों के अनुसार नहीं पायी गई। प्राप्त परिणाम

उत्साहवर्धक हैं जैसे कि 83% निलंबित ठोस अशुद्धि दूर हो जाती हैं; सीओडी तथा बीओडी क्रमशः 64% तथा 73% कम हो जाती हैं। केवल अमोनिकल नाइट्रोजन में कमी नहीं पायी गई।

चूंकि उपचार हेतु बनाए गए कुंड, सिल्ट से भरे हुए पाये गए थे तथा टूटे हुए पौधे आदि कुंडों में पड़े हुए थे। इसके अतिरिक्त कुछ अपशिष्ट जल धाराएं परियोजना के मध्य हिस्से में जुड़ती दिखाई दीं थीं। छोटे-छोटे कुंड (पॉन्डस) होने के कारण धारिता समय (retention time) तथा औक्सिकरन भी अपेक्षाकृत कम हो जाता है। अतः यह संभावना है कि अपशिष्ट जल के उपचार हेतु अनुकूलतम समय न मिल पाने के एवं रखरखाव न होने के कारण मानक के अनुसार परिणाम प्राप्त नहीं हो पा रहे हैं।

तथापि उपरोक्त परियोजना एक बेहतर प्रयास है जिसमे अपशिष्ट जल को निस्तारित करने के पूर्व, बिना लागत के यथासंभव उपचारित किया जा रहा है जो कि पर्यावरण के हित में है। जहाँ संभव हो वहाँ ऐसी परियोजना लगा कर जल स्रोतों के जल को प्रदूषित होने से बचाया जा सकता है।

वायु प्रदूषण और दिपावली

श्री एस.कार्तिकेयन, वैज्ञानिक ग क्षेत्रीय निदेशालय, चेन्नई

जीवन जीने के लिए सांसें तो जरूरी हैं ही और ये सांसें सुचारु रूप से चलती रहें इसके जरूरी है साफ हवा और साफ हवा आज शहरी क्षेत्र मे सिर्फ एक सपना बनकर रह गई है। जिसका कारण सिर्फ मानवीय गतिविधियां हैं। दुनिया भर की तमाम रिपोर्टों और शोधों के मुताबिक दुर्भाग्य से भारत उन देशों की सूची में ऊंचे पायदान पर है, जहां महानगरों की हवा अब जीने लायक भी नही है।

सर्दियां शुरू होते ही राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र व अन्य महानगरों की हवा सांस लेने लायक नही रह जाती है। वायु गुणवत्ता सुधारने के लिए दिल्ली में ग्रेडेड रिस्पांस एक्शन प्लान यानी ग्रैप लागू किया गया, फिर भी दिल्ली एनसीआर के सभी 15 निगरानी केन्द्रों में हवा की गुणवत्ता का स्तर बेहद खराब कैटेगरी में पायी गई। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक वायु प्रदूषण के मामले में दिल्ली दुनिया का छठा सबसे खराब शहर बनने जा रहा है। विशेषज्ञों ने आशंका जताई है कि आने वाले समय में प्रदूषण का यह स्तर और भी ज्यादा बढ़ सकता है।

क्या है प्रदूषण-

प्रदूषण, पर्यावरण में दूषक पदार्थों के प्रवेश के कारण प्राकृतिक संतुलन में पैदा होने वाले दोष को कहते हैं। वातावरण में रसायन तथा अन्य सुक्ष्म कणों के मिश्रण को वायु प्रदुषण कहते हैं। सामान्यतः वायु प्रदूषण कार्बन मोनोआक्साइड, सल्फर डाइआक्साइड, क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी) और उद्योग और मोटर वाहनों से निकलने वाले नाइट्रोजन आक्साइड जैसे प्रदूषको से होता है।

वायु में मौजूद पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे छोटे कण मनुष्य के फेफड़े में पहुंच जाते हैं, जिससे श्वास व हृदय संबंधित रोग होने का खतरा बढ़ जाता है और इससे फेफड़ों के कैंसर व दमा होने की भी आशंका हो सकती है। पीएम 10 के मुकाबले पीएम 2.5 जिन्हें बारीक कण भी कहा जाता है, स्वास्थ्य के लिए गंभीर चिंता का विषय हैं। पीएम10 वे कण हैं जिनका व्यास 10 माइक्रोमीटर होता है।

वायु प्रदूषण के असर-

हवा में अवांक्षनीय गैसों की उपस्थिति से मनुष्य, पशुओं और पक्षियों को गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इससे दमा, सर्दी खांसी, सांस लेने में दिक्कत, तथा त्वचा रोग जैसी बीमारियां पैदा होती हैं। सर्दियों के मौसम में हवा में धुएं और मिट्टी के कण मिल जाते हैं। और इस स्मॉग के कारण आखों में जलन होती है। गले में खराश और सांस लेने में दिक्कत होने के साथ साथ ओजोन परत का क्षय, ग्लोबल वार्मिंग और अम्लीय वर्षा का खतरा भी पैदा हो जाता है। दीपावली पर पटाखों से भी अत्यधिक वायु प्रदूषण होता है, यह कम समय के लिए ही होता है पर खतरनाक होता है।

हाल ही में दिवाली के त्यौहार के दौरान अमानक पटाखों की बिक्री पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लगाई गई रोक पटाखों से होने वाले प्रदूषण पर नियंत्रण करने के लिये उठाया गया एक सराहनीय कदम है।

सुप्रीम कोर्ट का फैसला

सुप्रीम कोर्ट ने कुछ दिन पूर्व देशभर में पटाखों की बिक्री पर पाबंदी लगाने से इनकार करते हुए कुछ शर्तों के साथ दिवाली पर आतिशबाज़ी की छूट दी थी। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि कम प्रदूषण वाले ग्रीन पटाखे यानी कम प्रदूषण फैलाने वाले पटाखों को ही इस्तेमाल किया जाये। दिवाली या ऐसे किसी दूसरे त्योहार में रात 8 से 10 बजे के बीच ये पटाखे जलाए जाये।

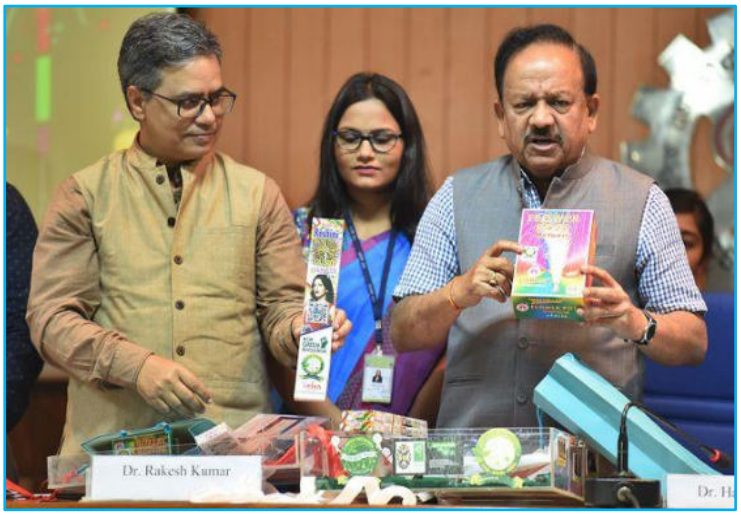

क्या हैं ग्रीन पटाखे-

दरअसल 'ग्रीन पटाखे' राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान (नीरी) की खोज हैं जो पारंपरिक पटाखों जैसे ही होते हैं पर इनके जलने से कम प्रदूषण होता है। ग्रीन पटाखे दिखने, जलाने और आवाज़ में सामान्य पटाखों की तरह ही होते हैं, लेकिन इनसे प्रदूषण कम होता है। सामान्य पटाखों की तुलना में इन्हें जलाने पर 40 से 50 फ़ीसदी तक कम हानिकारण गैस पैदा होते हैं।

ग्रीन पटाखे फ़िलहाल भारत के बाज़ारों में बहुत अधिक मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं। यह नीरी की खोज है और इसे व्यावसायिक स्तर पर बाज़ार में आने में वक़्त लग

सकता है। इसे बाज़ार में उतारने से पहले सरकार के सामने इसके गुण और दोष का प्रदर्शन करना होगा जिसके बाद इसे बाज़ार में उतारने की अनुमति मिलेगी। फ़िलहाल भारत के बाज़ारों में पारंपरिक तरीके से पटाखों का निर्माण हो रहा है। हालांकि कुछ केमिकल पर प्रतिबंध लगने के बाद कई तरह के पटाखों का निर्माण बंद हो चुका है।

निष्कर्ष-

यह विधित है कि प्रदूषण एक राष्ट्रीय समस्या है। प्रदूषण के मुख्य स्रोतों में जीवाश्म ईंधनों का सर्वाधिक योगदान होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा कई अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा किये गए अध्ययनों से भी यह तथ्य उजागर होता है कि वायु प्रदूषण के कारण विश्व को भारी सामाजिक-आर्थिक लागत वहन करनी पड़ती है। जिन क्षेत्रों में पर्यावरण क्षरण और प्रदूषण अधिक है, ऐसे क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को ज्यादा कीमत चुकानी पड़ती है।

डीजल से चलने वाले परिवहन वाहनों तथा ताप विद्युत संयंत्रों की संख्या पर नियंत्रण करके, 'सम-विषम फॉर्मूला' से, पौधारोपण को अधिक-से-अधिक बढ़ावा देकर, दीपावली पर ग्रीन पटाखों का उपयोग कर तथा वनों की कटाई रोककर वायु प्रदूषण पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है। साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लिये गए पर्यावरणीय एवं जलवायु परिवर्तन संबंधी निर्णयों को नीति-निर्माण में सम्मलित कर एवं जमीनी स्तर पर क्रियान्वयन द्वारा भी इसे नियंत्रित किया जा सकता है। उपरोक्त उपायों के माध्यम से वायु प्रदूषण जैसी विकट समस्या को काफी हद नियंत्रित किया जा सकता है।

लॉकडाउन मे पृथ्वी दिवस एक सुखद अनुभव

डॉ.चन्द्रकान्त दीक्षित, वैज्ञानिक 'ग'जल प्रयोगशाला दिल्ली
श्रीमती बी. शशि देवी, एस.एस.ए जल प्रयोगशाला दिल्ली

पृथ्वी को संरक्षण प्रदान करने तथा दुनिया के समस्त देशों से इस कार्य में सहयोगएवं समर्थन हासिल करने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष 22 अप्रैल को विश्वभर में 'पृथ्वी दिवस' मनाया जाता है। इस अवसर पर पर्यावरण संरक्षण तथा पृथ्वी को बचाने का संकल्प लिया जाता है। यह एक संयोग ही है कि इस बार वर्ष 2020 मे यह दिवस ऐसे समय में मनाया जा रहा है, जब पहली बार हम पृथ्वी को काफी हद तक साफ-सुथरी और प्रदूषण रहित देख पा रहे हैं। हालांकि यह सब प्रकृति संरक्षण के लिए मानवीय प्रयासों के चलते संभव नहीं हुआ है बल्कि इसका एकमात्र कारण कोरोना संकट के कारण दुनियाभर के अनेक देशों में चल रहा लॉकडाउन ही है अन्यथा इस पृथ्वी दिवस के अवसर पर भी प्रदूषण नियंत्रित कर पृथ्वी को संरक्षण प्रदान करने और धरती का कर्ज उतारने जैसी बातें ही हर साल की भांति दोहराई जा रही होती। कोरोना संकट ने पूरी दुनिया को पर्यावरण संरक्षण को लेकर सोचने का एक ऐसा अवसर प्रदान किया है, जहां दुनियाभर के तमाम देश एकजुट होकर अब समय-समय पर लॉकडाउन या ऐसी ही कुछ अन्य ऐसी योजनाओं पर विचार सकते हैं, जिनसे पर्यावरण संरक्षण में अपेक्षित मदद मिल सके।

पृथ्वी दिवस का आरंभ -

पहले दुनिया भर में प्रतिवर्ष दो बार 21 मार्च तथा 22 अप्रैल को पृथ्वी दिवस मनाया जाता था लेकिन वर्ष 1970 से यह दिवस 22 अप्रैल को ही मनाया जाना तय किया गया। 21 मार्च को पृथ्वी दिवस केवल उत्तरी गोलार्द्ध के वसंत तथा दक्षिणी गोलार्द्ध के पतझड़ के प्रतीक स्वरूप ही मनाया जाता रहा है। 21 मार्च को मनाए जाने वाले 'पृथ्वी दिवस' को हालांकि संयुक्त राष्ट्र का समर्थन प्राप्त है लेकिन उसका केवल वैज्ञानिक व पर्यावरणीय महत्व ही है जबकि 22 अप्रैल को मनाए जाने वाले

'पृथ्वी दिवस' का पूरी दुनिया में सामाजिक एवं राजनैतिक महत्व है। संयुक्त राष्ट्र में पृथ्वी दिवस को प्रतिवर्ष मार्च एक्विनोक्स (वर्ष का वह समय, जब दिन और रात बराबर होतेहैं) पर मनाया जाता है और यह दिन प्रायः 21 मार्च ही होता है। इस परम्परा की स्थापना शांति कार्यकर्ता जॉन मक्कोनेल द्वारा की गई थी।

पर्यावरणके प्रति लोगों को संवेदनशील बनाये जाने के उद्देश्य से 'पृथ्वी दिवस' पहली बार बड़े स्तर पर 22 अप्रैल 1970 को मनाया गया था और तभी से केवल इसी दिन यह दिवस मनाए जाने का निर्णय लिया गया। उस आयोजन में समाज के हर वर्ग और क्षेत्र के लोगों ने हिस्सा लिया था। पहले पृथ्वी दिवस के अवसर पर ही 'यूनाइटेड स्टेट्स एनवायरनमेंट प्रोटेक्शन एजेंसी' की स्थापना हुई थी तथा 'स्वच्छ वायु, स्वच्छ जल और लुप्तप्राय जीव' (क्लीन एयर, क्लीन वाटर एंड एन्डेंजर्ड स्पीसेज) से जुड़े कानून को स्वीकृति प्रदान की गई थी।

धरती खो रही अपना प्राकृतिक रूप -

अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर हर साल पृथ्वी दिवस के आयोजन की जरूरतही क्यों महसूस हुई? इसका जवाब है कि अनेक दुर्लभ प्राकृतिक सम्पदाओं से भरपूर हमारी पृथ्वी प्रदूषित वातावरण के कारण धीरे-धीरे अपना प्राकृतिक रूप खोती जा रही है और इसी प्राकृतिक रूप को बचाने हेतु लोगों को जागरूक करने तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशील बनाने के उद्देश्य से यह दिवस मनाया जाने लगा। हालांकि चिंता की बात यह है कि न केवल अपने देश में बल्कि समूची दुनिया में इस महत्वपूर्ण दिवस को लेकर सामाजिक जागरूकता का तो बड़ा अभाव है ही, राजनीतिक स्तर पर भी पृथ्वी संरक्षण के लिए कोई ठोस पहल होती नहीं दिखती। दुनियाभर में कुछ पर्यावरण प्रेमी तथा पर्यावरण संरक्षण से जुड़ी संस्थाएं धरती को बचाने की कोशिशें अवश्य करती रही हैं लेकिन जब तक धरती को बचाने की चिंता दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति की चिंता नहीं बनेगी और इसमें हर व्यक्ति का योगदान नहीं होगा, तब तक मनोवांछित परिणाम मिलने की कल्पना भी नहीं की सकती। धरती की सेहत बिगाड़ने और इसके सौन्दर्य को ग्रहण लगाने में समस्त मानव जाति ही जिम्मेदार है। आधुनिक युग में मानव जाति की

सुख-सुविधा के लिए सुविधाओं के हुए विस्तार ने ही पर्यावरण को सर्वाधिक क्षति पहुंचाई है और निरन्तर हो रहा जलवायु परिवर्तन भी इसी की देन है।

ग्लोबल वार्मिंग

न केवल भारत में बल्कि वैश्विक स्तर पर तापमान में लगातार हो रही वृद्धि तथा मौसम का निरन्तर बिगड़ता मिजाज गंभीर चिंता का सबब बना है। हालांकि जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए विगत वर्षों में दुनियाभर में दोहा, कोपेनहेगन, कानकुन इत्यादि बड़े-बड़े अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सम्मेलन होते रहे हैं और वर्ष 2015 में पेरिस सम्मेलन में 197 देशों ने सहमति पत्र पर हस्ताक्षर करते हुए अपने-अपने देश में कार्बन उत्सर्जन कम करने और 2030 तक वैश्विक तापमान वृद्धि को 2 डिग्री तक सीमित करने का संकल्प लिया था किन्तु उसके बावजूद इस दिशा में कोई ठोस कदम उठते नहीं देखे गए हैं। दरअसल वास्तविकता यही है कि राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर प्रकृति के बिगड़ते मिजाज कोलेकर चर्चाएं और चिंताएं तो बहुत होती हैं, तरह-तरह के संकल्प भी दोहराये जाते हैं किन्तु सुख-संसाधनों की अंधी चाहत, सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि, अनियंत्रित औद्योगिक विकास और रोजगार के अधिकाधिक अवसर पैदा करने के दबाव के चलते इस तरह की चर्चाएं और चिंताएं अर्थहीन होकर रह जाती हैं।

पृथ्वी दिवसकी सार्थकता -

प्रकृति अपना विकराल रूप कभी समुद्री तूफान तो कभी भूकम्प, कभी सूखा तो कभी अकाल के रूप में दिखाकर हमें बारम्बार चेतावनियां देती रही है, किन्तु जलवायु परिवर्तन से निपटने के नाम पर वैश्विक चिंता व्यक्त करने से आगे हमारे प्रयास बहुत कम हैं। अगर प्रकृति से खिलवाड़ कर पर्यावरण को क्षति पहुंचाकर हम स्वयं इन समस्याओं का कारण बने हैं और गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं को लेकर यदि हम वाकई चिंतित हैं तो इन समस्याओं का निवारण भी हमें ही करना होगा ताकि हम प्रकृपि के प्रकोप का भाजन होने से बच सकें अन्यथा प्रकृति से जिस बड़े पैमाने पर खिलवाड़ हो रहा है, उसका खामियाजा समस्त मानव जाति को अपने विनाश या अस्तित्व को

खोकर चुकाना पड़ सकता है। लोगों को पर्यावरण एवं पृथ्वी संरक्षण के लिए जागरूक करने के लिए साल में केवल एक दिन अर्थात् 22 अप्रैलको 'पृथ्वी दिवस' मनाने की औपचारिकता निभाने से कुछ हासिल नहीं होगा। अगर हम वास्तव में पृथ्वी को खुशहाल देखना चाहते हैं तो यही 'पृथ्वी दिवस' प्रतिदिन मनाए जाने की आवश्यकता है। बहरहाल, यह अब हमें ही तय करना है कि हम किस युग में जीना चाहते हैं? एक ऐसे युग में, जहां सांस लेने के लिए प्रदूषित वायु होगी और पीने के लिए प्रदूषित और रसायनयुक्त पानी तथा ढेर सारी खतरनाक बीमारियों की सौगात या फिर एक ऐसे युग में, जहां हम स्वच्छंद रूप से शुद्ध हवा और शुद्ध पानी का आनंद लेकर एक स्वस्थ एवं सुखी जीवन का आनंद ले सकें।

लॉकडाउन में प्रदूषण स्तर

डॉ.अनामिका सिंग, वैज्ञानिक ख
क्षेत्रीय निदेशालय, लखनऊ

पर्यावरण मानव जीवन का वह हिस्सा है, जिसके बिना जिंदगी की कल्पना भी मुश्किल है, इसके बावजूद पर्यावरण को लेकर लोग सहज और सजग नहीं है। तेजी से बढ़ती आबादी, कटते जगंल, अंधाधुंध शहरीकरण, खनन, तेज औद्योगीकरण और मशीनीकरण ने हवा, पानी, जमीन, वातावरण, नदी को प्रदूषित कर पर्यावरण संतुलन को बुरी तरह प्रभावित किया है।

सामाजिक परिभाषा बदल देने और अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचाने वाला कोरोना वायरस कम से कम पर्यावरण के नजरिये से संजीवनी बनकर आया है। लगभग दो महीने के लॉकडाउन के बीच पर्यावरण को लेकर कई सुकून देने वाली खबरें सामने आई हैं। अनेक महानगरों में प्रदूषण का स्तर कम होने की खबर हो या फिर गंगा व अन्य नदी के साफ हो जाने की सूचना, कोरोना लॉकडाउन ने वह कर दिखाया है, जिसकी कभी कल्पना करना तक मुश्किल था।

कार्बन, नाइट्रोजन उत्सर्जन में कमी के चलते ओजोन परत के भी ठीक होने की खबरें सामने आ रही है। वयस्क हो चुकी एक पीढ़ी लंबे समय बाद अपने महानगरों का साफ और नीला आसमान देख पा रही है और शुद्ध हवा में सांस ले पा रही है।

दरअसल, ध्वनि प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण हमेशा से ही वाहन रहे हैं, जिनकी आवाज से बड़े शहर ही नहीं बल्कि छोटे शहर भी परेशान हैं। वहीं लॉकडाउन के बीच ना सिर्फ वाहनों की आवाजाही पर पाबंदी रही, बल्कि बड़े कार्यक्रमों पर भी रोक लगी रही। ऐसे में हर तरफ ध्वनि प्रदूषण में कमी आई।

वातावरण ऐसे खिल उठा है, मानो लॉकडाउन उसके लिए वरदान बनकर आया. यकीनन, कोरोना वायरस के प्रकोप की रोकथाम के लिए 24 मार्च से लागू लॉकडाउन गरीब-गुरबों और प्रवासी मजदूरों के लिए आफत बनकर आया है लेकिन इसका एक नतीजा हर तरह के प्रदूषण में भारी कमी के रूप में दिख रहा है. वाकई, यह सुखद एहसास पैदा करता है। मानो प्रकृति अपने मूल स्वरूप में लौट गई है। हवा, पानी अपने शुद्घ-साफ स्वरूप में दिखने लगा है. इसके प्रमाण देश में स्पष्ट दिख रहे हैं। देश के प्रमुख तीर्थ स्थलों की नदियों मे जल एकदम साफ नीला दिखता है और वैज्ञनिक इसे पीने योग्य बता रहे हैं।

वैज्ञानिकों के अनुसार गंगा के साफ पानी की वजह, इसके पानी में घुले प्रदूषकों की मात्रा में आई कमी है। जाहिर है, ऐसा तीर्थनगरी में मौजूद धर्मशाला, होटल-लॉज से आने वाले सीवर और अन्य प्रदूषकों में कमी की वजह से हुआ है। पानी की गुणवत्ता में आया असर साफ दिखाई दे रहा है।

देश के प्रमुख पर्यटन शहर हों या फिर धार्मिक महत्व के तीर्थ या नगर हर जगह लॉकडाउन के चलते पर्यावरण में बहुत सुधार दिख रहा है। अप्रैल, मई और जून के महीनों में यहां लगभग सभी शहरों-कस्बों में लोगों की भीड़ लगी रहती थी लेकिन इन दिनों सन्नाटा पसरा हुआ है।

झीलों की नगरी भोपाल, उदयपुर, नैनीताल सभी में झीलों का पानी न केवल पारदर्शी और निर्मल दिखाई दे रहा है, बल्कि इन झीलों की खूबसूरती भी बढ़ गई है। पिछले कई साल से झील के जलस्तर में जो गिरावट दिखती थी, वह भी इस बार नहीं दिख रही। मछलियां झील की सतह पर आकर अठखेलियां करती दिखती हैं। यह सब शहर के होटलों और रेस्तरां के बंद होने का नतीजा है क्योंकि उनसे निकलने वाले कचरे और गंदे पानी में भारी कमी आई है।

वैज्ञानिकों के अनुसार हरिद्वार में हर की पैड़ी घाट पर पानी की गुणवत्ता में 40-50 प्रतिशत सुधार हुआ है। वहां रोज हजारों श्रद्धालुओं का आना-जाना होता था लेकिन लॉकडाउन में आवाजाही बंद है।

पर्यावरणीय तौर पर इस कारण हवा भी इतनी शुद्ध है कि शहरों से पहाड़ों की चोटियां साफ दिख रही हैं। यह बेशक महामरी की दहशत की घड़ी है लेकिन इससे हमें सबक भी लेना चाहिए, ताकि प्रकृति भी साफ बनी रहे और हमारा जीवन भी सुरक्षित रहे।

मनुष्य, विकास और पर्यावरण

डॉ.रानू चौकसे वर्मा, वैज्ञानिक ख
क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल

मनुष्य, पर्यावरण और विकास ये तीनों शब्द आपस में उतने ही विलीन है जैसे के परिवार के सदस्य होते हैं। यह सर्वविदित है की मनुष्य की उत्पत्ति में पर्यावरण का योगदान आविभागिय है। वहीँ पर्यावरणीय समस्याओं में मनुष्य का योगदान भी सर्वोपरि रहा है। अतः दोनों एक दूसरे के कारक है ।

साथ ही जिस पर्यावरण ने मनुष्य के सुख, समृद्धि एवं कल्याण हेतु नगिणत नि:शुल्क उपहार प्रदान किये हैं, परन्तु वर्तमान में पर्यावरणीय समस्या समूचे विश्व में विकराल रूप से आसन्न है तथा इस समस्या की कोई परिधि नहीं है ।

आज विश्व के ग्लोब पर कोई राष्ट्र उसके विकास के, जीवन यापन के स्तर के उदाहरण पर मापित किया जाता है। यह उसके शक्तिशाली होने का इकलौता प्रमाण बन गया है। इस मानसिकता वाले धरातल पर ये प्रश्न अत्यधिक विचार करने योग्य हैं कि-

इस परिस्थिति में मनुष्य, पर्यावरण एवं विकास के मध्य सौहाद्रता कैसे स्थापित की जाये? क्या आज के वैश्विक राजनीतितिक परिस्थिति में पर्यावरण संरक्षण विकास से अधिक महत्पूर्ण है? की आज वही राष्ट्र, वही मनुष्य पर्यावरण सुरक्षा का आंकलन नहीं कर रहे हैं जिनके विकसिकता के मार्ग पर चलने से पर्यावरण की वर्तमान परिस्थिति का जन्म हुआ है? के वर्तमान पर्यावरणीय समस्यायों एवं स्थिति के प्रतिकूल प्रभावों से सबसे अधिक प्रभावित होने वैल भी मनुष्य ही नहीं हैं?

इन अभी प्रश्नों के विचारार्थ मनुष्य पर्यावरण और विकास के मध्य सही सामंजस्य स्थापित करने का उत्तम विहार काल्पनिक सा प्रतीत होता है। हालाँकि, इन तीनो के मध्य स्थित रिश्ता सरल नहीं अपितु बहुत जटिल है। यहाँ तक कि आज स्वयं मनुष्य, पर्यावरण और विकास तीनों पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। पर्यावरण

ने जहां मनुष्य के विकासशील से विकसित होने का मार्ग प्रशस्त किया है, वही यह नैतिक जवाबदेही भी सौपी है कि वह पर्यावरण से संबुद्ध समस्त जीवों, वनस्पतियों तथा इनके मूल रूप में ही, इनके मध्य सामंजस्य बनाए रखे।

विकास के नाम पर भौतिक संसाधनो का अधिकाधिक दोहन, सुरक्षा के नाम पर हानिकारक, विनाशकारी पदार्थों का उत्पादन, बदती हुई जनसंख्या कि जरूरतों की प्राप्ति के लिए जंगलों का विनाशिकरण आदि निश्चित रूप से मनुष्य और पर्यावरण दोनों के लिए आत्मघाती हैं। अगर हम अपने इतिहास को टटोलें तो यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे विकास का हर एक बढ़ता स्तर हमारे पर्यावरण असंतुलन के स्तर को और एक स्तर ऊपर बढ़ा देता है। मनुष्य की एक बेहतर और आसान जीवन को पाने कि चाह तथा अपनी दक्षता को बढ़ाने की कोशिश ने उसे पर्यावरण से दूर ही किया है।

पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत विकास का स्तर भूगोल पर स्थित समस्त राष्ट्र जो ऊंचा कर रहे हैं, आज के परिवेश मे मनुष्य, पर्यावरण और विकास तीनों का साथ रहना कर पाना इतना सरल विचार नहीं प्रतीत होता। इस धेयय की प्राप्ति के लिए यह अत्याधिक आवश्यक है कि मनुष्य आत्महित अभीष्ट के विचार से ऊपर उठे और पर्यावरण के प्रति अपनी अन्य प्रतिबंधों को द्वितीय न आँके।

मनुष्य कि पूंजीवादी सोच पर्यावरण सुरक्षा एवं सतत विकास के लिए प्रतिकूल है जो राष्ट्रों को पर्यावरण व संसाधनों के अत्याधिक दोहन के लिए उकसाती है। इस विचारधीन हम स्वयं को पर्यावरण से जुड़ा हुआ न महसूस कर, पर्यावरण को लाभ देने वाली एक वस्तु मात्र के रूप मे अंकित करते हैं। साथ ही यह विचारधारा पर्यावरण तथा अन्य जीवों कि सुरक्षा के प्रति हमारी प्रतिबद्धता पर भी हावी सिद्ध होती है। इस विचारन्तर्गत वर्तमान परिस्थिति मे समाधान क्या है?

मनुष्य, पर्यावरण और विकास तीनों एक दूसरे के पूरक हैं। अतः एक ऐसे मार्ग का चुनाव किया जाना चाहिये जहां तीनों अपनी सर्वोत्तम स्थिति मे बाने रहते हुए एक सुंदर भविष्य जहां विकास का अर्थ सभी का विकास हो के लिए प्रतिबद्ध हों।

जहां संसाधनों का दोहन स्वयं को शक्तिशाली बनाने के लिए नहीं अपितु मानव जाति व अन्य अन्य जीव-जंतुयो के विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण के लिए हो। जहां मनुष्य स्वयं को पर्यावरण से अलग न समझे। जहां मनुष्य स्वयं एक महत्त्वपूर्ण संसाधन के रूप मे कार्य करे। जहां विकास को मापने का मानक सिर्फ पूंजीवाद और उद्योगवाद से परपूर्ण न हो। जहां विकसित देश विकासशील व अविकसित देशों को भी एक समान सम्मानित स्तर पर लाने का प्रयास करें। सही अर्थों मे "ग्रीन विकास" की परिभाषा तभी पूर्ण हो सकती है।

पर्यावरण के प्रति संवेदना

श्री अवनीन्द्र कुमार, एस.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय, कोलकाता
श्री अजय दुबे, जे.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय, कोलकाता

प्रति वर्ष जैसे ही पर्यावरण दिवस आता है, हम सभी पर्यावरण संरक्षण के लिए और भी कड़े कानून, नियम व उपनियम बनाने की आवाज़ तेज कर देते है। यद्यपि कानून महत्वपूर्ण हैं, परंतु वे पर्यावरण के संरक्षण के लिए पर्याप्त नहीं है जब तक कि नैतिक मूल्य के रूप मे हम इन कानून का पालन स्वत: ही नही करते है।

दुनिया भर की सभी प्राचीन संस्कृतियों ने प्रकृति - पेड़-पौधों, नदियों, पर्वतों और पर्यावरण को सदा से ही महत्व दे कर संरक्षित किया है। भारत में तो काटे जाने वाले प्रत्येक पेड़ के बदले में पांच पेड़ लगाए जाने की परंपरा हमारी संस्कृति व कानून का एक अहम हिस्सा है। जल हमारे सभी महत्वपूर्ण रीति-रिवाजों एवं अनुष्ठानों का एक अभिन्न भाग है। नदियों को माता के रूप में और पृथ्वी को देवी के रूप में पूजा जाता है। प्रकृति को पवित्र एवं देवतुल्य मानने की इस परंपरा को आज के आधुनिक युग में भी जीवित रखे जाने की आवश्यकता है। लोगों को जल संरक्षण तथा प्राकृतिक व रसायनमुक्त कृषि के अभिनव तरीके सिखाए जाने चाहिए।

वास्तव में मानवीय लोभ एवं पर्यावरण के प्रति असंवेदनशीलता ही प्रदूषण का मूल कारण हैं। त्वरित और अधिक लाभ का लोभ पर्यावरण के संतुलन को गंभीर रूप से बाधित करता है, और इससे न सिर्फ भौतिक रूप से वातावरण प्रदूषित होता है, बल्कि सूक्ष्म स्तर पर भी यह नकारात्मक भावनाओं को उत्तेजित करता है। हमें मानव की कार्यशैली व जीवनशैली मे परिवर्तन करने की आवश्यकता है, जो कि सभी प्रकार के प्रदूषण का मूल कारण है।

यह प्रतीत हो रहा है कि पारिस्थितिक तंत्र मे गिरावट को प्रौद्योगिकी और विकास का एक अनिवार्य उप-उत्पादन मान लिया गया है जो सर्वथा अनुचित है। तकनीक और विज्ञान खतरनाक नहीं हैं, परंतु तकनीकी और वैज्ञानिक प्रक्रियाओं से

निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ प्रकृति के लिए खतरनाक होते हैं, अगर इनका प्रबंधन उचित तरीके से ना किया जाये।

प्रौद्योगिकी का उद्देश्य प्रकृति का उपयोग कर, मनुष्यों को साधन और सुविधाएं प्रदान करना है। जब आध्यात्मिक और मानव मूल्यों को नजरअंदाज कर दिया जाता है, तो प्रौद्योगिकी सुविधा की अपेक्षा परेशानी का कारण बन जाती है। पर्यावरण संरक्षण से जुड़े हुए किसी भी अभियान की सफलता के लिए आध्यात्मिक जागरूकता एक अभिन्न अंग है तथा जब तक पर्यावरण के प्रति अपने भीतर करुणा एवं रक्षा की भावना जागृत नही होगी तब तक उसके संरक्षण पर संशय बना रहेगा।

प्राचीन आध्यात्मिक ज्ञान के अनुसार पर्यावरण के साथ हमारा संबंध मानव अनुभव का सबसे पहला स्तर है। ऐसी मान्यता है कि यदि हमारा पर्यावरण स्वच्छ और सकारात्मक है, तो इससे हमारे अस्तित्व के अन्य सभी स्तरों पर भी एक सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। ऐतिहासिक रूप से, मानव मानसिकता में पर्यावरण के साथ घनिष्ठ संबंध बनाया गया है। जब हम स्वयं से और प्रकृति से दूर होने लगते हैं, तब हम पर्यावरण को प्रदूषित और नष्ट करना शुरू कर देते हैं।

हमें प्रकृति से अपने संबंधों को सुदृढ़ करने वाले दृष्टिकोण और परंपरागत प्रथाओं को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। लोगों को इस पृथ्वी के प्रति सम्मान भाव रखने, पेड़ और नदियों को पवित्र मान कर उनकी रक्षा करने, लोगों और प्रकृति में भगवान को देखने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। इससे संवेदनशीलता को बढ़ावा मिलेगा; और एक संवेदनशील व्यक्ति ही प्रकृति की देखभाल कर सकता है, उसे संपोषित कर सकता है।

इन सब से बढ़ कर, हमें ऐसे खुले मन, जो कि तनावमुक्त हो, से अपने इस संसार का अनुभव करने में सक्षम होना होगा और फिर हमें अपनी इस जीवनदायनी धरती को बचाने के उपाय करने होंगे। ऐसा तभी संभव है जब मानव चेतना के स्तर पर लालच और दोहन की भावना कम हो जाए जो वर्तमान मे संभव प्रतीत नहीं हो रहा है।

प्रौद्योगिकी और विज्ञान को बढ़ावा देते हुए पर्यावरण के साथ सामंजस्य बनाए रखना वर्तमान सदी की सबसे बड़ी चुनौती है। इस संतुलन को बनाए रखने में केवल आध्यात्मिक मूल्य ही सहायक हो सकते हैं। धरती को हरा भरा ओर साफ सुथरा रखना हमारा ही नहीं बल्कि हम सबका दायित्व है।

मानव का कर्तव्य जानकार, स्वर्ग धरा पर लाना है।

प्रदूषण के दुष्प्रभाव से, जन जन को बचना है।

सिक्कम में जैविक खेती से पर्यावरण संरक्षण

श्री आनंद कुमार ड़ांड्रोम, जे.एस.ए.
क्षेत्रीय निदेशालय,शिलोंग

अनाज हमारी सबसे मूलभूत जरूरतों में शामिल है। 1960 के दशक में भारतीय इतिहास में हुई हरित क्रान्ति से हमने पर्याप्त अनाज भंडार तो जमा कर लिया था लेकिन इसी के साथ हमारे देश में केमिकल खाद और कीटनाशकों का भी आगमन हो चुका था। हरित क्रांति से उत्पादन तो बढ़ गया था लेकिन इससे हमारी खेती समेत जल, वायु ज़मीन सब पर असर पड़ना भी शुरू हो गया था।

अब इस स्थिति में जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। भारत का सिक्किम दुनिया का ऐसा पहला राज्य है जहां पूर्ण रूप से ऑर्गेनिक खेती होती है। आज सिक्किम पूरी दुनिया के लिए एक मिसाल बन गया है। अपनी इस अपार सफलता के लिए सिक्किम को संयुक्त राज्य ने सर्वश्रेष्ठ नीतियों के लिए ऑस्कर सम्मान से भी सम्मानित हुआ है।

कृषि को स्थानीय बीजों और संसाधनों पर आधारित करने और रासायनिक खादों, कीटनाशकों से मुक्त करने का महत्व पर्यावरण की दृष्टि से तो समझा जाने लगा है, पर बहुत-से लोग अब भी इसकी व्यावहारिकता के बारे में सवाल उठाते हैं। उन्हें लगता है कि इससे पैदावार में कमी आएगी और साथ ही किसान की आय भी घटेगी। मिट्टी का अपना जीवन है, उसमें असंख्य सूक्ष्म जीवाणुओं का निवास है, जल ग्रहण करने और वायु के संचार की व्यवस्था है, अनेक तरह के पोषक तत्व पेड़-पौधों को संतुलित रूप में देने की क्षमता है। जब यह पूरी व्यवस्था टूटती है तो भूमि की उर्वरता नष्ट होती है। बाहर से तो वही मिट्टी नजर आती है, पर उसकी जीवनदायिनी क्षमता बहुत कम हो जाती है।

पिछले चार-पांच दशकों में एक अन्य बड़ी गलती हमने यह की कि मिट्टी का उपजाऊपन बनाए रखने के अनुकूल खेती के जो तौर-तरीके बहुत समय से चले आ

रहे थे, उन्हें छोड़कर रसायनों के भारी उपयोग की ऐसी तकनीकें अपनाईं, जो मिट्टी के उपजाऊपन के लिए और हानिकारक सिद्ध हुईं।

रासायनिक खाद खेतों में जहर घोल रहा है अत: किसानों ने सदा फसल-चक्र में या मिश्रित खेती में इन फसलों पर समुचित ध्यान दिया। अलग-अलग गहराई की जड़ें मिट्टी की विभिन्न तहों से पोषण प्राप्त करती हैं, ताकि एक ही तरह का अधिक दोहन न हो। इस बात का ध्यान भी मिश्रित खेती की फसल चुनने या फसल-चक्र को चुनने में रखा गया। फायदा यह हुआ कि एक फसल ने नाइट्रोजन प्राप्त की तो दूसरे ने नाइट्रोजन उपलब्ध करवा दी। इस तरह लगभग पांच हजार वर्षों से देश में खेती होती रही और इन फसलों का पोषण करने की मिट्टी की क्षमता भी बनी रही। दूसरी बात हमारे किसानों ने यह सीख ली थी कि पशुओं के गोबर, फसलों के अवशेषों, वनों की पत्तियों आदि का भरपूर उपयोग मिट्टी के उपजाऊपन को बनाए रखने के लिए किया जाए।

मगर पिछले चार-पांच दशकों में जिस रसायन आधारित खेती को बहुत जोर-शोर से बढ़ावा मिला है, वह प्रकृति की पोषक तत्वों को उपलब्ध कराने वाली व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करती है। उदाहरण के लिए, मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ाने, वायु संचार के लिए इसे भुरभुरा बनाने और उसे अनेक पोषक तत्व उपलब्ध कराने का बहुमूल्य कार्य केंचुए करते हैं, वे इन रसायनों के असर से बड़े पैमाने पर मारे जाते हैं। इसी तरह अनेक अन्य उपयोगी जीवाणु और वनस्पतियां, जो अनेक जटिल प्रक्रियाओं से मिट्टी का उपजाऊपन बनाए रखने में बहुत सहायता करते हैं, वे भी नष्ट हो जाते हैं।

प्राय: रासायनिक खाद और कीटनाशक का बहुत कम हिस्सा अपने वास्तविक उद्देश्य के काम आता है। इसका एक बड़ा हिस्सा तो हमारे विभिन्न जल-स्रोतों में पहुंच जाता है और भू-जल को प्रदूषित करता है। इसके कारण गंभीर स्वास्थ्य-समस्याएं इस पानी का उपयोग करने वाले स्थानीय निवासियों और पालतू पशुओं, दोनों में देखी गई हैं।

रासायनिक उर्वरक का विकल्प जैविक खेती

ऐसे में, ये जानना दिलचस्प होगा कि क्या है जैविक खेती? सिक्किम ने किन नीतियों पर चलकर खुद को 100 प्रतिशत ऑर्गेनिक राज्य बना लिया-

साल 2003 में सिक्किम राज्य सरकार ने एक ऑर्गेनिक स्टेट में बदलने का संकल्प लिया। जिसके बाद साल 2016 में अपनी नीतियों और प्रयासों से सिक्किम दुनिया का सबसे पहला ऑर्गेनिक राज्य घोषित हुआ। इसके लिए संयुक्त राज्य के खाद एवं कृषि संगठन (FAO) ने सिक्किम को अपनी सर्वश्रेष्ठ नीतियों के लिए ऑस्कर अवार्ड दिया। यहाँ सौ प्रतिशत ऑर्गेनिक खेती होती है। करीब पच्चीस नामांकित राज्यों को पछाड़कर सिक्किम को यूएन ने ये खिताब दिया। संयुक्त राज्य ने इस पुरस्कार को देते समय सिक्किम के इसे भूख और गरीबी से लड़ने और पर्यावरण की रक्षा करने वाला कदम बताया था।

जैविक खेती (Organic Farming) है क्या?

जैविक खेती सदाबहार प्राचीन पद्धति है जिससे पर्यावरण शुद्ध बना रहता है और भूमि का प्राकृतिक स्वरूप भी बना रहता है। इसके प्रयोग से मिट्टी उपजाऊ रहती है और सूखे जैसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता है।

जैविक खेती में रासायनिक उर्वरकों की जगह जीवाश्म खादों का प्रयोग किया जाता है। साथ ही, खरपतवार कीटनाशकों की जगह जैविक खाद का प्रयोग किया जाता है। जैविक खेती में गोबर खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, बायो-पेस्टिसाइड, केंचुआ खाद, नीम खली, लेमन ग्रास और फल के अवशेष का प्रयोग किया जाता है। इसमें जीवाणु कल्चर फॉलो होता है।

रणनीति क्या रही ....

सिक्किम को ऑर्गेनिक राज्य बनाने के लिए 75 हज़ार हेक्टेयर जमीन को जैविक में बदला गया। इसके लिए उन्होंने सिक्किम राज्य बोर्ड का गठन भी किया था। देश-विदेश के कई कृषि विकास और शोध से जुड़ी संस्थाओं के साथ साझेदारी भी

की गई। इसमें स्विट्ज़रलैंड के जैविक अनुसंधान को भी शामिल किया गया था। जैविक खेती के लिए गांव पंचायतों को क्लस्टर के रूप में विकसित करने पर ज़ोर दिया गया। इस तरह सिक्किम की प्लानिंग काम आई।

बायो-विलेज का संकल्प

ऑर्गेनिक फार्मिंग को लेकर जागरूकता फैलाई गई। इसके लिए ऑर्गेनिक फार्म्स, ऑर्गेनिक स्कूल और घर-घर में जाकर ऑर्गेनिक खादों से लोगों को अवगत करवाया। साथ ही, खेती के लिए पोषण प्रबंधन, तकनीक, कीट प्रबंधन और प्रयोगशालाएं भी शुरू की। इसके अलावा, अम्लीय भूमि उपचार, जैविक पैकिंग समेत अनेकों जागरूकता अभियान चलाएं। दिलचस्प बात तो यह है कि सिक्किम की आय और उत्पादन में कमी देखने को मिल रही थी, जिसके बाद राज्य ने ऑर्गेनिक खेती में शिफ्ट होने का फैसला लिया था।

पूर्ण रूप से ऑर्गेनिक राज्य में तब्दील होने की राह आसान नहीं थी। राज्य सरकार ने इसके लिए पहले गाँवों को गोद लिया और उन्हें बायो-विलेज में तब्दील करने का संकल्प किया। उसके बाद खाद संबंधी दिए जा रहे कोटे को बंद किया गया और सभी को ऑर्गेनिक खाद उपलब्ध कराए गए। साथ ही, लोगों को खेती के लिए जैविक प्रमाण पत्र भी दिए गए। इन सब कदमों को उठाने के बाद से सिक्किम की खेती का दायरा बढ़ गया। वहां 22 लाख हेक्टेयर से ज्यादा उत्पादन हुआ।

आज के समय में जैविक खेती तेज़ी से लोकप्रिय हो रही है। भारत समेत पूरा विश्व इसे अपना रहा है। चूँकि इसके फायदे ही इतने सारे हैं कि यह पर्यावरण की सुरक्षा के साथ-साथ हम इंसानों को बेहतर अनाज देता है।

जैविक खेती से होने वाले लाभ

- **कृषकों की दृष्टि से लाभ**
    - भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
    - सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है।

- रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है।
- फसलों की उत्पादकता में वृद्धि।

- **मिट्टी की दृष्टि से लाभ**
  - जैविक खाद का उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
  - भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
  - भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा।
- **पर्यावरण की दृष्टि से लाभ**
  - भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है।
  - मिट्टी, खाद्य पदार्थ और ज़मीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण मे कमी आती है।
  - कचरे का उपयोग खाद बनाने में होने से बीमारियों में कमी आती है।
  - फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृद्धि ।
  - अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार स्पर्द्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का खरा उतरना।

<u>निष्कर्ष</u>

भारत एवं विश्व के अन्य देशों के किसानों का अनुभव रहा हैं कि रासायनिक खेती को तत्काल छोड़कर जैविक खेती अपनाने वाले किसानों को पहले तीन सालों तक आर्थिक रूप से घाटा हुआ, चौथे साल ब्रेक-ईवन बिंदु आता है तथा पाँचवे साल से लाभ मिलना प्रारंभ होता है। सरकार को पशुपालन को बढ़ावा देना चाहिये जिससे किसान जैविक खाद के लिये पूरी तरह बाज़ार पर आश्रित न रहें। तात्कालिक आवश्यकता यह है कि प्राथमिकताओं में परिवर्तन लाया जाए और सब्सिडी को रासायनिक कृषि से जैविक कृषि की ओर मोड़ा जाए जैसा कि सिक्किम राज्य ने किया है। सरकार को रासायनिक कृषि क्षेत्र को प्रदत्त अवांछित सब्सिडी को जैविक कृषि क्षेत्र की ओर मोड़ देना चाहिये और देश भर में कृषकों को प्रोत्साहित व प्रशिक्षित करना चाहिये कि वे जैविक कृषि अभ्यासों की ओर आगे बढें तथा इस प्रकार अपनी आजीविका में वृद्धि करें एवं रासायनिकों के खतरे से जीवन की रक्षा करें।

कोरोना काल में बायोमेडिकल वेस्ट प्रबंधन एक चुनौती

डॉ.अनूप चतुर्वेदी, एस.एस.ए. क्षेत्रीय निदेशालय, भोपाल

भारत में चूंकि पवित्र और अपवित्र की बहुत प्रबल धारणा है और जो अपवित्र है, उसे न सिर्फ छूना, बल्कि उसके बारे में बात करना भी निषिद्ध है, इसलिए कचरा प्रबंधन यहां अकादमिक या वैचारिक चर्चाओं से आम तौर पर बाहर रहता है। लेकिन चूंकि इस बार ये सवाल लोगों की जिंदगी से सीधे जुड़ गया है और ये जिंदगी सिर्फ गरीबों और वंचितों की नहीं है, इसलिए इस बारे में बात हो रही है।

कोरोना के संक्रमण को कम करने के लिए प्रारंभ से ही पर्याप्त स्वच्छता बनाए रखने के निर्देश दिए जा रहे हैं। मास्क पहनना अनिवार्य कर दिया गया है। जैसे जैसे मरीजों की संख्या बढ़ रही है, बायोमेडिकल वेस्ट की मात्रा भी बढ़ती जा रही है, लेकिन भारत में पहले से ही बायोमेडिकल वेस्ट के प्रबंधन की पर्याप्त सुविधा नहीं रही है। सामान्य कचरे का प्रबंधन भी देश के नगर निकाय उचित रूप से और पर्याप्त मात्रा में नहीं कर पाते हैं। ऐसे में कोरोना के दौरान अस्पतालों, क्वारंटीन सेंटरों सहित विभिन्न चिकित्सा केंद्रों से निकलने वाले कचरे से परेशानी और बढ़ रही है। परेशानी के कारण उत्पन्न होने वाले संकट की आशंका जताते हुए ही 24 मार्च 2020 को संयुक्त राष्ट्र के पर्यावरण कार्यक्रम ने दुनियाभर की सरकारों से कोविड-19 से जुड़े कचरे का सावधानीपूर्वक निस्तारण करने की अपील की थी। इसके लिए बेसल संधि (Basel Convention) पत्र का हवाला देते हुए दिशा-निर्देश जारी किए गए थे। भारत ने भी इस संधि पत्र में हस्ताक्षर किए थे। इस पर कितना अमल किया जा रहा है यह विचार करने योग्य है।

कोरोना मरीजों की संख्या बढ़ने से बायोमेडिकल वेस्ट बढ़ रहा है। आम दिनों की अपेक्षा बायोमेडिकल वेस्ट की मात्रा बढ़ गई है, जिसमें थूक, मल, मरीक्षण के नमूने का बचा हुआ अपशिष्ट, माइक्रोबायोलाजिकल और बायोटेक्निकल कचरा, खराब हो चुकी दवाइयां, ठोस, तरल और रासायनिक अपशिष्ट, फेंके हुए मास्क और ग्लव्स, इस्तेमाल की हुई पीपीई किट और अन्य सुरक्षा किट आदि शामिल है।

यद्यपि बायोमेडिकल वेस्ट के निस्तारण के मामले में भी भारत ने भी बहुत प्रगति की है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने कोविड बायोमेडिकल वेस्ट के निस्तारण के लिए गाइडलाइन भी जारी की हैं। समय के साथ इन गाइडलाइन मे सुधार भी किया गया है तथा वर्तमान मे इसका चौथा संस्करण प्रभावशील है, तथा इसमे समयानुसार व सुझाव प्राप्त होने पर इसमे संशोधन किया जाता है।

भारत में कचरे का निस्तारण इसलिए भी बेहद जरूरी है, क्योंकि भारत में कोरोना के मामलों में अब तेजी आ रही है तथा अब संक्रमित की संख्या 56 लाख तक आ गई है। कोरोना के मामलों के बढ़ने के साथ ही बायोमेडिकल कचरा भी अधिक मात्रा में उत्पन्न हो रहा है। जिसका उचित प्रबंधन करना हमारे लिए बहुत बड़ी चुनौती है।

सरकार ने घर से बाहर मास्क पहनकर निकलना अनिवार्य कर दिया है। जब हम घर से निकलते है तो सड़क के किनारे, कचरे के ढेर में, पत्तों के बीच व सार्वजनिक स्थान पर मास्क ज़मीन पर पड़े देख सकते है जिसका प्रबंधन आवश्यक है। समान्यतः अखबार में डॉक्टर, नर्स, सामाजिक कार्यकर्ता आदि की तस्वीरों को ही देखते है जो कोरोना वॉरियर्स के चेहरे के रूप में दिखाई देते है, जो अब तक आपके व मेरे ज़ेहन में है, परंतु इसमे एक नया चेहरा और है जो नेपथ्य मे छुपा है और दिखाई नहीं देता।

वो चेहरा है, अस्पतालों से कोरोना का कचरा उठाने वाले सफ़ाई कर्मचारियों का या मेडिकल वेस्ट संयंत्र को चलाने वाले ऊध्यमियों का, जो बिना किसी प्रचार के समाज के लिए कार्य कर रहे है। इन्हें भले ही आप अब तक कोरोना की लड़ाई का महान खिलाड़ी ना मान रहे हों लेकिन सच्चाई इसके उलट है।

मेडिकल वेस्ट मैनेजमेंट को एसेंशियल सर्विस तो माना गया है, पर सवाल उठता है कि अगर उनकी सर्विस एसेंशियल है तो उसे प्राथमिकता देते हुए उन्हे आर्थिक सहायता क्यो नही दी जाती तथा नगरीय निकाय भी उनके काम को उतनी

गंभीरता से क्यों नहीं लेते। एक मेडिकल वेस्ट ट्रीटमेंट प्लांट चलाने वाला उध्यमी या उनके यहाँ काम करने वाले सफाई कर्मी आज के कोरोना काल में मौत के उतने ही खतरे में है, जितना भारत-पाकिस्तान सीमा पर ड्यूटी करने वाला सैनिक, तो फिर राष्ट्र उतने ही संजीदा तरीके से उनका ख्याल क्यों नहीं रख पा रहा है ?

कोरोना वायरस अपने साथ बहुत सारी चुनौतियां लेकर आया है। उनमें से एक है कोरोना की वजह से निकलने वाला कचरा। कोविड-19 के ट्रीटमेंट, डायग्नोसिस और क्वारंटीन के दौरान तमाम तरह की चीज़ों का इस्तेमाल होता है। वेस्ट एक्सपर्ट्स के मुताबिक, प्रतिदिन हर राज्य से औसतन एक से 1.5 टन कोविड वेस्ट निकल रहा है।

शासकीय दिशा-निर्देश के मुताबिक आइसोलेशन वार्ड्स, कलेक्शन सेंटर्स, टेस्टिंग लैब में कोविड वेस्ट के लिए अलग नियम हैं और क्वारंटीन सेंटर्स और होम क्वारंटीन के लिए अलग नियम हैं जो निम्न है-

आइसोलेशन वार्ड्स, कलेक्शन सेंटर्स, टेस्टिंग लैब: कोविड-19 वेस्ट के लिए अलग-अलग रंग के और डबल-लेयर्ड बैग या डिब्बे रखे जाने चाहिए। उन पर साफ़ तौर पर लेबल लगा होना चाहिए। जिन ट्रॉली से कोविड वेस्ट ले जाया जा रहा, उन्हें किसी दूसरे कचरे के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। जो सैनिटेशन स्टाफ कोविड-19 के कचरे को हैंडल कर रहा है, उन्हें किसी और ड्यूटी पर या दूसरे कचरे को हैंडल करने के लिए नहीं लगाया जाना चाहिए।

क्वारंटीन सेंटर्स: बायोमेडिकल वेस्ट पीले बैग में इकट्ठा करना होगा। फिर उसे बायोमेडिकल वेस्ट ट्रीटमेंट फैसेलिटी में भेज देना होगा। रोज़ाना के कचरे को सोलिड वेस्ट मैनेजमेंट रूल्स, 2016 को ध्यान में रखकर मैनेज कर सकते हैं।

होम क्वारंटीन: जो घर पर हैं, उन्हें बायोमेडिकल वेस्ट अलग करके पीले बैग में रखना होगा। फिर ये कचरा, स्थानीय प्रशासन द्वारा नियुक्त किए गए वेस्ट कलेक्शन स्टाफ को दे देना होगा।

हर तरह के मेडिकल वेस्ट के लिए तय रंग के कूड़ेदान या डस्टबिन का इस्तेमाल करना पहला और सबसे बेसिक प्रॉसेस है यह डस्टबिन निम्न होते है-

पीला कूड़ादान - बॉडी वेस्ट, केमिकल वेस्ट, गंदे/इंफेक्टेड कपड़े, दवाइयों या लैब्स से निकला कचरा इसमें डालें।

लाल कूड़ादान - इंफेक्टेड प्लास्टिक कचरा. जैसे- ट्यूबिंग, प्लास्टिक की बोतलें, सिरिंज (सुई के बिना) वगैरह।

नीला कूड़ादान - कांच की वस्तुएं. जैसे- टूटी-फूटी या खाली शीशियां/बोतलें वगैरह।

सफ़ेद कूड़ादान - धारदार मेटल वाला कचरा. जैसे- सुई, ब्लेड।

हर तरह के कचरे को अलग-अलग रखने के बाद प्लास्टिक बैग कसकर बंद करें ताकि कोई भी कचरा फैलने न पाए। इसके बाद इसे उपचार हेतु कॉमन बायोमेडिकल वेस्ट ट्रीटमेंट फैसिलिटी में भेजें कर डिस्पोज़ किया जाता है।

ये बहुत सीधा-सिंपल सा प्रॉसेस है, लेकिन दिक्कत ये है कि यही फॉलो नहीं हो पा रहा है। गाइडलाइन्स तो बन गई हैं। लेकिन इनका पालन करने में कई तरह की चुनौतियां आ रही हैं व इसका प्रभावी अनुपालन नहीं हो पा रहा है।

कोविड-19 कचरा प्रबंधन

कोविड कचरे की समस्या से निबटने के लिए केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने हाल ही में कुछ दिशानिर्देश जारी किये हैं, जिनका पालन बेहद आवश्यक है। इन दिशा निर्देशों में कहा गया है कि:

- कोविड-19 के मरीजों वाले एकांत शिविरों और अस्पतालों में कचरा इकठ्ठा करने के लिए दो-परतों वाले प्लास्टिक बैग का इस्तेमाल किया जाना चाहिए, जिससे कि रिसाव की संभावना न रहे।
- कोविड-19 से सम्बंधित कचरा “कॉमन बायो मेडिकल वेस्ट ट्रीटमेंट फैसिलिटी” (CBWTF) भेजे जाने से पहले इस तरह के कचरे के झोलों पर कोविड-19 का स्टीकर लगा होना चाहिए। इस कचरे को सामान्य कचरे से अलग किसी अन्य कमरे में रखा जाना चाहिए। इस प्रकार इस कचरे को सीधे “कॉमन बायो मेडिकल वेस्ट ट्रीटमेंट फैसिलिटी” के कर्मियों को सौंपा जाना चाहिए ताकि

संक्रामक कचरे को प्रमुखता और प्राथमिकता के साथ निस्तारित किया जा सके।

- विभिन्न प्रदेशों में बने कोविड-19 एकांत शिविरों आदि की जानकारी प्राथमिकता के साथ प्रादेशिक प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड्स को भेजी जानी चाहिए। कोविड-19 वाले कचरे के ढ़ोने के लिए अलग वाहनों का इस्तेमाल होना चाहिए जिनके शुद्धिकरण के लिए 1% हाइपोक्लोराईट विलयन का इस्तेमाल अति-आवश्यक है।
- कोविड के कचरे को इकठ्ठा करने के लिए प्रदेशों को तुरंत विशेष सफाई कर्मचारियों को नियुक्त करना चाहिए जो कि प्राथमिकता के आधार पर कोविड-कचरा अस्थाई कचरा भण्डारण केन्द्रों तक पहुंचा सकें।
- सभी स्वास्थ केंद्र व नगरीय निकाय द्वारा उत्पन्न कोविड वेस्ट की मात्रा को सेंट्रल पॉल्यूशन कंट्रोल बोर्ड द्वारा विकसित एप पर अपलोड किया जाय।

यही वजह है कि सेंट्रल पॉल्यूशन कंट्रोल बोर्ड ने तमाम बड़े शहरों के स्वास्थ केंद्र/नगर निगमों को ये निर्देश जारी किए है कि वे सबसे पहले तो स्वास्थ कर्मियों/लोगों को ये बताएं कि अस्पताल/घर से निकल रहे कचरे को कैसे अलग-अलग रखना है। जनरल वेस्ट अलग और मेडिकल वेस्ट अलग (पीली पन्नी में). फिर कचरा कलेक्शन करने वालों को पीली पन्नी वाले कचरे को लेकर ठीक-ठीक दिशा-निर्देश बताएं। इससे एक तो इंफेक्शन का ख़तरा कम होगा, साथ ही मेडिकल वेस्ट प्लांट पर लोड नहीं बढ़ेगा, तो बायोमेडिकल वेस्ट का सही निपटान हो सकेगा।

कोविड वेस्ट इकट्ठा करके डेडिकेटेड गाड़ियों से कॉमन बायोमेडिकल वेस्ट फैसेलिटी ले जाया जाता है, जहां उच्च तापमान पर इस कचरे को जला दिया जाता है। लेकिन ये फैसेलिटी भी देश में हर जगह नहीं है। कई छोटे शहरों और ग्रामीण इलाकों में ये सुविधा नहीं है तथा वहाँ इस कचरे का निस्तारण डीप बुरीयल माध्यम से किया जा रहा है।

उपाय क्या है ?

आने वाले संकट से बचने के लिए कई काम करने होंगे। एक तो सभी सफाईकर्मियों को सुरक्षा के सारे उपकरण प्राथमिकता के आधार पर दिए जाएं। हर क्वारंटाइन सेंटर और घरों में भी वहीं पर संक्रामक कचरे को अलग करने के बारे में जागरूकता फैलाई जाए। अस्पताल, क्लिनिक, पैथ लैब और बायो-मेडिकल वेस्ट ट्रीटमेंट फेसिलिटीज में कचरा निपटाने की गाइडलाइंस का सख्ती से पालन सुनिश्चित किया जाय। स्वास्थ विभाग व नगरीय निकाय इन गाइडलाइंस का प्रभावी अनुपालन करे व वेस्ट प्रबंधन की अधोसंरचना विकसित करें। प्रशासन मे उच्च पदो पर आसीन अधिकारी भी वेस्ट प्रबंधन की गाइडलाइंस के मूलभाव को समझे व इसकी मूल अवधारणा को व्यापक जनहित मे लागू करें।